सत्यापन क्रमांक : RAJHIN/2015/60530

ओ३म्

महर्षि दयानन्द स्मृति प्रकाश

हिन्दी मासिक

वर्ष : १ अंक : ११ १ नवम्बर २०१५ जोधपुर (राज.) पृ.:३६ मूल्य १५० ₹ वार्षिक

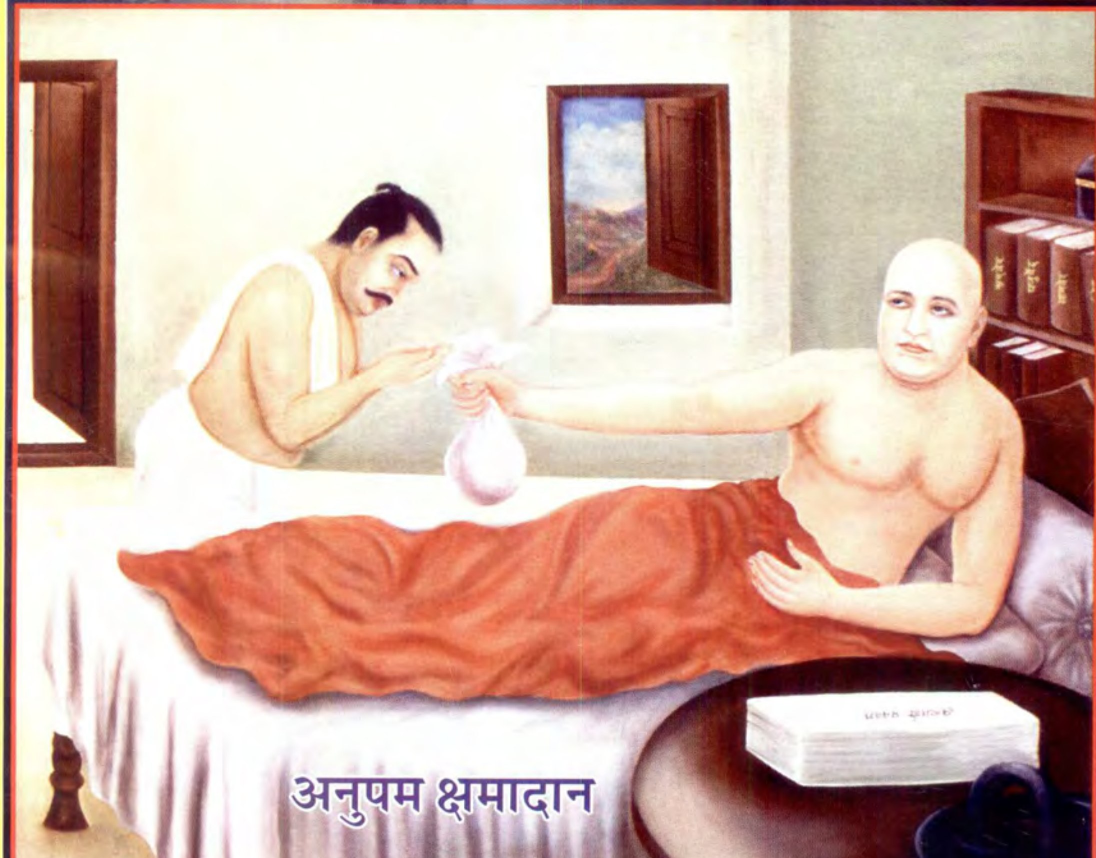

कार्यालय :
महर्षि दयानन्द सरस्वती स्मृति भवन न्यास
जसवन्त कॉलेज के पास, मोहनपुरा, जोधपुर

132 वॉ ऋषि स्मृति सम्मेलन में महिला मण्डल द्वारा अपने विचार प्रकट करते हुए

कृण्वन्तो विश्वमार्यम् । -ऋग्वेद ९।६३।५

सबको श्रेष्ठ बनाओ

महर्षि दयानन्द स्मृति प्रकाश का मुख्य प्रयोजन

महर्षि दयानन्द सरस्वती के व्यक्तित्व, कृतित्व, व उनके द्वारा समस्त लिखित साहित्य तथा उनके सार्वभौमिक अद्वितीय कार्यों का प्रचार-प्रसार व व्यवहार में साकार करने के लिये कार्य करना

महर्षि दयानन्द सरस्वती स्मृति भवन न्यास, जोधपुर का मुखपत्र

वर्ष : 1 **अंक : 11**

कार्तिक संवत् २०७२

नवम्बर २०१५

सृष्टि संवत् १९६०८५३११६

महर्षि दयानन्द स्मृति प्रकाश

पायें, पढें, पचायें

	क्या	कहाँ
1	ईश्वर स्तुति-प्रार्थना	4
2	वेद : आओ अग्नि का....	5
3	सृष्टि रचना के मूल तत्व...	7
4	महर्षि दयानन्द के बलिदान.....	11
5	प्राचीन विश्वासों पर वेदों........	16
6	दीपावली......	21
7	आहार-विहार	26
8	दानदाताओं की सूची	28
9	आर्यसमाज के दस नियम	31
10	धारा 80जी के तहत छूट प्राप्त	32

सम्पादक मण्डल :

पं. सत्यानन्दजी वेदवागीश, नोएड़ा

प्रा. राजेन्द्र जिज्ञासु, अबोहर

डॉ. धर्मवीर, अजमेर

डॉ. सुरेन्द्रकुमार, हरिद्वार

डॉ. वेदपालजी, मेरठ

पं. रामनारायण शास्त्री

आचार्या सूर्यादेवी चतुर्वेदा

विशेष : महर्षि दयानन्द स्मृति प्रकाश में प्रकाशित लेखों में व्यक्त विचार लेखकों के अपने हैं । उनसे सम्पादक की सहमति आवश्यक नहीं है ।

कार्यवाहक सम्पादक :

दुर्गादास 'वैदिक'

99293-82335

mail i.d.: info@dayanandsmritinyas.org.

www.dayanadsmritinyas.org.

प्रकाशक :

महर्षि दयानन्द सरस्वती स्मृति भवन न्यास, जोधपुर

वार्षिक शुल्क :150 रुपये

आजीवन शुल्क : 1100 रुपये (15 वर्ष)

महर्षि दयानन्द सरस्वती स्मृति भवन न्यस

बैंक ऑफ बडौदा खाता संख्या-01360100028646

IFSC BARB0JODHPU

यह पांचवा अक्षर जीरो है

ईश्वर-स्तुति
प्रार्थना

ऊर्ध्वो नः पह्यंहसो नि केतुना
विश्वं समत्रिणं दह।
कृधी न ऊर्ध्वाञ्चरथाय जीवसे
विदा देवेषु नो दुवः ।।१।३।१०।४।।

<u>व्याख्यान-</u> हे सर्वोपरि विराजमान परब्रह्मन्! आप"ऊर्ध्व:" सबसे उत्कृष्ट हो, हमको कृपा से उत्कृष्ट गुणवाले करो, तथा ऊर्ध्व देश में हमारी रक्षा करो। हे सर्वपापप्रणाशकेश्वर! हमको "केतुना" विज्ञान अर्थात् विविध विद्यादान दे के "अंहस:" अविद्यादि महापाप से "निपाहि" नितरां पाहि- सदैव अलग रखो। तथा "विश्वम्" इस सफल संसार का भी नित्य पालन करो। हे सत्यमित्र न्यायकारिन्! जो कोई प्राणी "अत्रिणम्" हम से शत्रुता* करता है उसको और काम क्रोधादि शत्रुओं को आप "संदह" सम्यक् भस्मीभूत करो (अच्छे प्रकार जलाओ)। "कृधी न ऊर्ध्वान्" हे कृपानिधे! हमको विद्या, शौर्य, धैर्य, बल, पराक्रम, चातुर्य, विविध धन ऐश्वर्य, विनय, साम्राज्य, सम्मति, सम्प्रीति, स्वदेशसुखसंपादनादि गुणों में सब नरदेह धारियों से अधिक उत्तम करो तथा "चरथाय जीवसे" सबसे अधिक आनन्द भोग, सब देशों में अव्याहतगमन (इच्छानुकूल जाना आना) आरोग्य देह, शुद्ध, मानस-बल और विज्ञान इत्यादि के लिए हमको उत्तमता और अपनी पालनायुक्त करो। "विदा" विद्यादि में उत्तमोत्तम धन "देवेषु" विद्वानों के बीच में प्राप्त करो अर्थात् विद्वानों के मध्य में भी उत्तम प्रतिष्ठायुक्त सदैव हमको रक्खो।।

---

* वेद भाष्य के "अत्रिणम्-अत्ति भक्षयत्यन्यायेन परपदार्थान् य: स शत्रुस्तम्। अन्याय से दूसरों के पदार्थों को खाने वाले शत्रु मात्र को........।"

—आर्याभिविनयः से

आओ, अग्नि का गुणगान करें

ओ३म् अग्निमीळे पुरोहितं यज्ञस्य देवमृत्विजम्।
होतारं रत्नधातमम्।। १।१।१।

पदार्थ-(अग्निम्) ज्ञानस्वरूप, व्यापक, सबके अग्रणीय नेता और पूज्य परमात्मा की मैं (इळे) स्तुति करता हूँ। कैसा है वह परमेश्वर ? (पुरोहितम्) जो सबके सामने स्थित, उत्पत्ति से पूर्व परमाणु आदि जगत् का धारण करने वाला (यज्ञस्य देवम्) यज्ञादि उत्तम कर्मों का प्रकाशक, (ऋत्विजम्) वसन्त आदि सब ऋतुओं का उत्पादक और सब ऋतुओं में पूजनीय, (होतारम्) सब सुखों का दाता तथा प्रलयकाल में सब पदार्थों का ग्रहण करने वाला (रत्नधातमम्) सूर्य, चन्द्रमा आदि रमणीय पदार्थों का धारक और सुन्दर मोती, हीरा, सुवर्ण-रजत आदि पदार्थों का अपने भक्तों को देने वाला है।

भावार्थ- ज्ञानस्वरूप परमात्मा सर्वत्र व्यापक, सब प्रकार के यज्ञादि श्रेष्ठ कर्मों का प्रकाशक और उपदेशक, सब ऋतुओं में पूजनीय और सब ऋतुओं का बनाने वाला, सब सुखों का दाता और सब ब्रह्माण्डों का कर्त्ता, धर्त्ता और हर्त्ता है। हम सबको ऐसे प्रभु की ही उपासना, प्रार्थना और स्तुति करनी चाहिये।

ईश-प्रार्थना

ओ३म् इषे त्वोर्ज्जे त्वा वायवः स्थ देवो वः सविता प्रार्पयतु श्रेष्ठतमाय कर्मण-ऽआप्यायध्वमघ्न्या ऽइन्द्राय भागं प्रजावतीरनमीवा ऽअयक्ष्मा मा व स्तेन ऽईशत माघशꣳसो ध्रुवा-ऽअस्मिन् गोपतौ स्यात बह्वीर्यजमानस्य पशून्पाहि। १।१।

पदार्थ- हे परमेश्वर! (इषे) अन्नादि इष्ट पदार्थों के लिये (त्वा) आपको (ऊर्जे) बलादिकों की प्राप्ति के लिये आश्रयण करते हैं। हे जीवो! (त्वा वायवः) तुम वायुरूप (स्थ) हो। (सविता देवः) जगत् उत्पादक देव। (श्रेष्ठतमाय कर्मण) उत्तम कर्म के लिये (वः) तुम सबको (प्रार्पयतु) सम्बद्ध करे, उस उत्तम कर्म द्वारा (इन्द्राय भागम्) उत्तम ऐश्वर्य को प्राप्त ऐसे उत्तम पुरुष के भाग को (आप्यायध्वम्) बढ़ाओ, यज्ञादि कर्मों के सम्पादन के लिये (अघ्न्या) न मारने योग्य (प्रजापतिः) बछड़ों वाली (अनमीवाः) साधारण रोगों से रहित, (अयक्ष्माः) तपेदिक आदि बड़े रोगों से रहित गौएँ सम्पादन करो (वः) आप लोगों के बीच जो (स्तेनः) चोर हो, वह उन गौओं का (मा ईशत) स्वामी न बने, और (अघशंसः) पाप चिन्तक भी (मा) उनका स्वामी न बने। ऐसा प्रयत्न करो जिससे (बह्वीध्रुवा) बहुत सी चिरकाल पर्यन्त रहने वाली गौएँ (अस्मिन् गोपतौ) इस दोष रहित गौ रक्षक के पास (स्यात्) बनी रहें। प्रभु से प्रार्थना है कि (यजमानस्य) यज्ञादि उत्तम कर्म करने वालो के (पशून् पाहि) पशुओं की हे ईश्वर! रक्षा कर।

भावार्थ- हे परमेश्वर ! अन्न और बलादिकों की प्राप्ति के लिये आपकी प्रार्थना, उपासना करते हुये आपका ही हम आश्रय लेते हैं। परम दयालु प्रभु जीव को कहते हैं कि हे जीव ! तुम वायुरूप हो। प्राणरूपी वायु से ही तुम्हारा जीवन बन रहा है। तुमको मैं जगत्कर्ता देव, शुभ कर्मों के करने के लिये प्रेरणा करता हूँ। यज्ञादि उत्तम कर्म कर्ताओं के लिये श्रेष्ठ गौओं का संग्रह करना आवश्यक है। प्रभु से प्रार्थना है कि हे ईश्वर ! यज्ञादि श्रेष्ठ कर्म करने वाले यजमान के गौ आदि पशुओं की रक्षा करें।

अन्धकार का नाश कीजिए

ओ३म् अग्न आ याहि वीतये गृणानो हव्यदातये। नि होता सत्सि बर्हिषि। पू.१।१।१।१।

शब्दार्थ- (अग्ने) हे सर्वप्रकाशक सर्वव्यापक सबके नेता परमपूज्य परमात्मन् ! (बर्हिषि) आप हमारे ज्ञानयज्ञ रूप ध्यान में (आ याहि) प्राप्त होओ।(गृणान:) आप स्तुति किये हुए हैं। (होता) आप ही दाता हैं। (वीतये) हमारे हृदय में प्रकाश करने के लिये तथा (हव्यदातये) भक्ति, प्रार्थना, उपासना का फल देने के लिये (नि सत्सि)विराजो।

भावार्थ- परम कृपालु परमात्मा, वेद द्वारा हम अधिकारियों को प्रार्थना करने का प्रकार बताते हैं हे जगत्पिता: ! आप प्रकाशस्वरूप हैं, हमारे हृदय में ज्ञान का प्रकाश कीजिये। आप यज्ञ में विराजते हो, हमारे ज्ञानयज्ञ रूप ध्यान में प्राप्त होओ। आपकी वेद और वेदद्रष्टा ऋषि लोग स्तुति करते हैं। हमारी स्तुति को भी कृपा करके श्रवण कर, हम पर प्रसन्न होओ। आप ही सबको सब पदार्थ और सुखों के देने वाले हो।

दिव्य शक्ति वाले देव

ओ३म् ये त्रिषप्ता: परियन्ति विश्वास रूपाणि बिभ्रत:। वाचस्पतिर्बला तेषां तन्वो अद्य दधातु मे। १।१।१।

शब्दार्थ- (ये त्रिषप्ता:) जो प्रसिद्ध इक्कीस देव (विश्वारूपाणि) सब आकारों को (बिभ्रत:) धारण-पोषण करने वाले (परियन्ति) प्रति शरीर में यथायोग्य वर्तमान रहते हैं (तेषां बला) उन देवों के बलों को (वाचस्पति:) वेद वाणी का रक्षक और स्वामी (मे तन्व:) मेरे शरीर के लिए (अद्य दधातु) अब धारण करे।

भावार्थ- हे वेद वाणी के पालक और मालिक परमात्मन् ! मेरे शरीर में जो ५ महाभूत, ५ प्राण, ५ ज्ञानेन्द्रिय, ५कर्मेन्द्रिय, १ अन्त:करण ये इक्कीस दिव्य शक्ति वाले देव वर्तमान हैं। ये सब शरीरों में सब आकार और सब रूपों को धारण करने वाले हैं। आप कृपा करके इन सबके बल को मेरे लिये धारण करें। मैं आपका सेवक आत्मिक-शारीरिक आदि बलयुक्त होकर, आपकी वैदिक आज्ञा का पालन करता हुआ, मोक्ष आदि उत्तम सुख का भागी बनूँ।

सृष्टि रचना के मूल तत्व

-जीवात्मा-

-आचार्य लक्ष्मीदत्त दीक्षित

आत्मा देहादि से भिन्न है- इसे सिद्ध करने हेतु कुछ अन्य हेतु-

अब तक हमने आत्मा देहादि से भिन्न है- इसे सिद्ध करने में हमने अब तक निम्न हेतु प्रस्तुत किये-

(i) शरीर के जलाये जाने पर पाप के अभाव से।

(ii) शरीर के जल जाने पर पाप-पुण्य का नाश न होने से

(iii) कृतहानि और अकृताभ्यागम दोष के आ जाने से।

(iv) षष्ठी विभिक्त के व्यवहार से भी।

अब हम अगला हेतु प्रस्तुत करते हैं।

(v) चक्षु और त्वक् इन्द्रियों के द्वारा एक अर्थ के ग्रहण से।

खाद्य पदार्थ को आँख से देख कर ही जिह्वा में पानी भर आता है। यदि इन्द्रियाँ ही ज्ञाता होतीं तो ऐसा कभी नहीं होता क्योंकि और के देखे का और को स्मरण नहीं हो सकता। जो विभिन्न इन्द्रियों द्वारा गृहीत ज्ञानों का प्रतिसन्धांन करता है वह इनसे भिन्न आत्म-तत्व है।

(vi) बाई आँख से देखे पदार्थ का दाई आँख से प्रत्यभिज्ञान से।

जिस वस्तु को पहले बाई आँख से देखा हो उसे दाई आँख से देख कर यह कहना कि यह वही वस्तु है जिसे बाई आँख से देखा था उस वस्तु का प्रत्यभिज्ञान है। यदि देह से भिन्न आत्मा को न माना जाये तो प्रत्यभिज्ञान हो ही नहीं सकता क्योंकि अन्य के देखे का अन्य को स्मरण नहीं हो सकता।

(vii) संघात के परार्थ होने से।

संघात रूप में विद्यमान समस्त अचेतन तत्त्व परार्थ देखा जाता है। उसकी समस्त प्रवृत्ति 'पर' के लिए है। समस्त त्रिर्गुणात्मक जगत भोग्य है। उसकी उपयुक्तता व सफलता तभी है जब कोई उसका भोक्ता हो। अचेतन भोग्य जगत का कोई चेतन भोक्ता होना आवश्यक है। इसलिये प्रकृति के भोक्ता के रूप में आत्मा (जीवात्मा) का अस्तित्व सिद्ध है।

(viii) यह आत्मा, सिद्ध होते हुए भी, इन्द्रियों से दिखाई नहीं देती क्योंकि यह इन्द्रियों का विषय नहीं हैं।

अगले सूत्रों में आत्मा के नित्यत्व का विवेचन।

(1) जीवात्मा अनादि और अनन्त है।

ब्रह्म की भाँति जीव भी अनादि और अनुत्पन्न है। वह स्वरूप से नित्य है।

(i) जीव की उत्पत्ति जड़ पदार्थ से संभव नहीं क्योंकि जड़ में चेतना न होने से उससे चेतन जीव नहीं बन

सकता।

(ii) यदि कहे कि परमात्मा ने अपने में से बना दिया तो परमात्मा विकारी हो जायेगा।

(iii)जीव ईश्वर का न अंश है, न छाया। अंश होता है अवयवी का। किन्तु ईश्वर अखण्ड और विभु है। इसलिए जीव और ईश्वर में अंशांशी भाव नहीं घट सकता। छाया पड़ती है किसी पदार्थ की किसी दूरस्थ पदार्थ में। ईश्वर से दूरस्थ कोई पदार्थ नहीं जिससे ईश्वर की छाया पड़ सके। इसलिए प्रतिबिम्बवाद से भी जीव की उत्पत्ति सम्भव नहीं।

(iv) कार्य-कारण सम्बन्ध से भी जीव का उत्पन्न होना नहीं बनता। प्रथम तो 'कारणगुणपूर्वकः कार्यगुणो दृष्टः' के नियम के अनुसार ईश्वर को कारण और जीव को उसका कार्य मानने से जीव के गुण-कर्म-स्वभाव ईश्वर के गुण-कर्म-स्वभाव के सदृश होने चाहिये, किन्तु ऐसा है नहीं।

(v)ईश्वर सच्चिदानन्द है जब कि जीव न केवल सच्चित् है। इसी प्रकार ईश्वर सर्वव्यापक, सर्वज्ञ, सर्वशक्तिमान और निर्विकार है जब कि जीव अल्पशक्ति, अल्पज्ञ और विकारी है।

(vi) दूसरे कारण, कार्य से पहले होता है। इसलिये ईश्वर और जीव दोनों का एक साथ होना नहीं बनता। इस प्रकार जीव को किसी भी रूप में निर्मित अथवा उत्पन्न हुआ मानना तर्क विरुद्ध है। फिर, जो बना है वह कभी नष्ट भी अवश्य होगा।

(2) आत्मा तो अविनाशी है।

जिसका आदि है उसका अन्त अवश्य होगा। किन्तु आत्मा अमर है 'न हन्यते हन्यमाने शरीरे' (गीता) शरीर के नष्ट हो जाने पर भी आत्मा बना रहता है। जड़ और चेतन (प्रकृति व जीव) - एक शासक और दूसरा शासित दोनों ही अजन्मा हैं। यह चेतन आत्मा न जन्मता है, न मरता है।

जब वह जीवात्मा पुरुष शरीर से युक्त होता है तब जन्मा हुआ कहा जाता है और शरीर छोड़ने पर मरा हुआ कहलाता है। इस प्रकार जीवात्मा में जन्म- मरण का व्यवहार देह के संयोग, वियोग के आधार पर होता है।

देह को छोड़ कर जीव स्थानान्तर और शरीरान्तर को प्राप्त कर लेता है। पूर्व-पूर्व जन्म में अनुष्ठित कर्मों के अनुसार विविध प्रकार के शरीरों को धारण करना जीवात्मा की अनादि और अनन्त जन्म-कर्म-फल परम्परा को सिद्ध करता है। जातमात्र बालक द्वारा हर्ष, भय, शोक की अभिव्यक्ति और आहार की इच्छा तथा प्रयत्न को देख सहज ही उसके पूर्व जन्म के अभ्यास की प्रतीति होती है। यह जीवात्मा के अविनाशी होने और अविनाशी होने से उसके अनुत्पन्न होने का स्पष्ट प्रमाण है।

* आत्मा के नित्यत्व में एक अन्य हेतु प्रस्तुत करते हैं।

सत (भाव) का अभाव नहीं होता है।

जिस प्रकार अभाव से भाव की उत्पत्ति संभव नहीं, उसी प्रकार भाव का विनाश अथवा अभाव भी संभव नहीं। यदि आत्मा का अस्तित्व सिद्ध है, तो उसका अनादि और अनन्त होना स्वतः सिद्ध है। यदि 'हम

हैं' सत्य है तो हम थे और 'हम होंगे' भी उतना ही सत्य है। जिस तर्क से हम हैं उसी तर्क से हम थे और हम होंगे भी।

★ अब जीवात्मा के परिमाण का विवेचन करते हैं।

अब जीवात्मा परिच्छिन्न (अनु परिमाण) है।

(i) अणु जीवात्मा शरीर में रह कर मन आदि अंत:करण द्वारा सारे शरीर का नियन्त्रण करता है। ाुण्डकोपनिषद् (३-१-९) में स्पष्ट रूप से आत्मा को अणु बताया है- 'एषोऽणुरात्मा चेतसा वेदितव्य:' ग्रह अणु आत्माशुद्धान्त: करण से जानने योग्य है।

(ii) आत्मा को विभु मानने का तात्पर्य होगा कि जीवात्मा आकाश के समान सर्वत्र ओत-प्रोत है-एक ही आत्मा सर्वत्र वर्तमान होने से सब शरीरों में वर्तमान होने से सब शरीरों में वर्तमान होगा और सब जीवों के सुख:-दु:ख और समस्त क्रियाओं में पूर्ण समानता होगी।

उस अवस्था में जाग्रत, स्वप्न, सुषुप्ति, जन्म, मरण, संयोग, वियोग कुछ भी न होगा। जीवात्मा के उत्क्रन्ति, गति, आगति आदि धर्मों का भी सामंजस्य न रहेगा।

ये सब युक्तियाँ और प्रमाण आत्मा के अणु परिमाण को सिद्ध करती है। इस परिच्छिन्न जीव की शक्तियाँ ही शरीर में प्राण, बिजली और नाड़ी आदि के साथ संयुक्त होकर कार्य करती हैं।

★अगले सूत्र में इस भ्रम का निवारण किया गया है कि जितना बड़ा शरीर होता उतना ही बड़ा उसमें रहने वाला आत्मा-

(i) देह के अनुरूप जीवन का परिणाम नहीं होता।

जीव अत्यन्त सूक्ष्म पदार्थ है जो परमाणु में भी रह सकता है। छोटे-बड़े शरीरों के अनुसार आत्मा को मध्यम परिमाण मानने पर उसमें संकोच-विकास के आवश्यक होने से वह अनित्य हो जायेगा।

(अ) कृशकाय व्यक्ति का छोटा और स्थूलकाय व्यक्ति का जीव बड़ा होगा। इससे जीव अवयवी हो जायेगा क्योंकि निरवयव पदार्थ का शरीरों के अनुसार घटना बढ़ना नहीं हो सकता।

(आ)सावयव होने पर अवयवों के संयोग वियोग के कारण जीव विकारी हो जायेगा। अणु परिमाण होने से जीव चींटी और हाथी दोनों के शरीर में रह सकता है। ऐसा न मानकर जीव को शरीर परिमाणी मानने पर हाथी का जीव चींटी में और चींटी का जीव हाथी में कैसे समायेगा और कार्य करेगा।

(ii) अब जीव के परिमाण का उल्लेख करते हैं।

जीवात्मा बाल से सूक्ष्म है। प्रकाशान्तर से जीव के अणुत्व का उल्लेख करते हुए अथर्ववेद (१०-८-२५) में कहा कि एक अर्थात् जीवात्मा बाल से भी सूक्ष्म है और एक प्रकृति है जो दिखती ही नहीं। इन दोनों में जो व्याप्त जो देवता है वही मेरा प्रिय है। इस मंत्र में वर्णित जीव के स्वरूप को श्वेताश्वतर उपनिषद् (५-९) में स्पष्ट करते हुए कहा "बाल के अग्रभाग के १०० भाग किये जायें तो उनमें से एक के बराबर जीव परिणाम है और वह मुक्तिके लिए समर्थ होता है।

(iii) आत्मा हृदय में रहता है।

आत्मा के अणु परिमाण होने से यह स्वतः सिद्ध है कि वह शरीर में किसी नियत स्थान में रहता है। वह स्थान कौन सा है? छान्दोग्य उपनिषद् (८-३-३) में बताया है कि निश्चय से वह आत्मा हृदयदेश में रहता है। इसी प्रकार वृहदारण्यकोपनिषद् (४-३-७) में भी कहा है कि "आत्मा कौन है, जो यह ज्ञाता प्राणों (इन्द्रियों) के बीच घिरा हुआ हृदयदेश के अन्दर चेतन पुरुष है । अब यहां से प्रश्न उठता कि जिस हृदय में आत्मा वास करता है वह हृदय कहाँ है? क्या रक्त का प्रक्षेप करने वाला हृदय ही आत्मा का निवास स्थान है? सुश्रुत शरीर (४.३४) में कहा है-

हे सुश्रत! देहियों का चेतना स्थान हृदय कहा जाता है। वह हृदय जब तमस् से अभिभूत हो जाता है तो देही निद्रा अवस्था में प्रवेश करता है। रक्त का प्रक्षेप करने वाला हृदय तो जाग्रत और निद्रा दोनों अवस्थाओं में अनवरत अपना काम करता रहता है। इसलिए उसके तमस् से अभिभूत होकर निद्रा का प्रयोजक बनने का प्रश्न ही नहीं है । निश्चय ही इस हृदय का स्थान मस्तिष्क में है। मस्तिष्कगत हृदयदेश की वह क्रिया तमस् से अभिभूत होने पर शिथिल हो जाती है, जो ज्ञान वहा नालीयों के द्वारा बाह्य इन्द्रियों का सम्पर्क मस्तिष्कगत उस प्रदेश के साथ जोड़ती है जहाँ मन आदि अन्तः करणों के सहयोग से आत्मा बाह्य विषयों से अनुभूति रखता है। ज्ञानतन्तुओं का केन्द्र मस्तिष्क होने से वही आत्मा का आवास है। जहाँ से वह ज्ञानतन्तुओं के द्वारा सम्पूर्ण शरीर का नियन्त्रण करता है। क्रमशः

आर्य समाज सूरसागर का
६१वाँ वार्षिकोत्सव

दिनांक 15, 16, 17 व 18 नवम्बर 2015 को

सूरसागर आर्य समाज में आयोजित किया जा रहा है अतः सभी आर्य बन्धुओं से निवेदन है कि समय पर पधार कर धर्म लाभ उठाएँ ।

आयोजन में आमन्त्रित विद्वान्

अाचार्य श्री आर्य नरेशजी चाम्बा, आचार्य रामनारायणजी शास्त्री

भजनीक

पं. श्री भूपेन्द्रसिंहजी, श्री लेखराजजी, पं. श्री केशवदेवजी, सुमेरपुर

कार्यक्रम :

प्रातः 8.30 से 11.00 यज्ञ, भजन व प्रवचन

सायं : 6.30 से 10.00 यज्ञ, भजन व प्रवचन

आयोजक : आर्य समाज सूरसागर

प्रधान-आर्य किशनलाल गहलोत कोषाध्यक्ष-नरपतसिंह गहलोत मन्त्री-नरसिंहजी सोलंकी

महर्षि दयानन्द के बलिदान व देह-त्याग के कुछ प्रेरक प्रसङ्ग

-प्रा. राजेन्द्र 'जिज्ञासु'

१. महर्षि दयानन्दजी महाराज ३१ मई सन् १८८३ की प्रातः जोधपुर पधारे। उनके जोधपुर पहुँचने के २६ दिन के पश्चात् महाराज जसवन्तसिंह ऋषिजी के दर्शन करने आए। महर्षि की जोधपुर यात्रा का गम्भीर अध्ययन करते हुए प्रबुद्ध पाठकों को यह तथ्य ध्यान में रखना चाहिए।

२. शाहपुराधीश नाहरसिंह तथा अजमेर के कई भक्तों ने जोधपुर जाने से रोका। जोधपुर को राक्षस-प्रदेश तक बताया। श्री नाहरसिंह ने कहा कि यदि वहाँ जा ही रहे हैं तो वेश्यागमन, व्यभिचार का अधिक खण्डन न कीजिए। यह दूसरा तथ्य है जिसे ऋषि जीवन के पाठकों को सदा स्मरण रखना चाहिए।

३. ऋषिजी ने चेतावनियाँ दिये जाने पर दो महत्वपूर्ण वाक्य कहे थे।

(क) ''मैं बड़े-बड़े कँटीले वृक्षों को नुहरने से नहीं काटा करता। उनके लिए तो अति तीक्ष्ण शस्त्रों की आवश्यकता होगी।

(ख) ''यदि लोग हमारे अंगुलियों की बत्तियाँ बनाकर जला दें तो भी कोई चिन्ता नहीं। मैं वहाँ जाकर अवश्य सत्योपदेश करूँगा।

यह तीसरा तथ्य है जो ऋषि के जीवन-चरित्र कि अध्ययन करने वाले प्रत्येक पाठक को हृदयङ्गम करना चाहिए।

४. शाहपुराधीश ने महर्षिजी की सुख-सुविधा के लिए दो सेवक साथ दिये। इनमें से एक तो घोड़ों को छोड़कर अपने घर से चला गया और दूसरा कहीं वहीं शाहपुरा में छिपा रहा।

शाहपुरा के भेजे हुए कर्मचारी ऐसे दुष्ट व निकम्मे थे, यह चौथा तथ्य भी स्मरण रखना चाहिए।

५. जोधपुर में पोपलीला व वेदविरुद्ध मतों के खण्डन के कारण नामधारी धर्माचार्यों का विरोधी बन जाना स्वभाविक था ही। महाराजा की वेश्याओं में से प्रमुख नन्ही भक्तन (सचमुच वह बड़ी भक्तन थी, उसका बनवाया मन्दिर अब तक भी जोधपुर में है।) को वेश्यागमन का घोर खण्डन करना बहुत बुरा लगा। राज्य के शासन को चलाने वाले वहाँ दो ही तो व्यक्ति थे। एक नन्हीं भक्तन और दूसरा मियाँ फैजुल्ला खाँ। फैजुल्ला खाँ के भतीजे मोहम्मद हुसैन ने तो तलवार पर हाथ रखकर श्री महाराज को भरी सभा में धमकी दी थी। ऋषिजी ने इस धमकी का उपर्युक्त उत्तर दे दिया।

यह पाँचवाँ तथ्य है जो प्रबुद्ध पाठकों को नहीं भुलाना चाहिए।

६. २९ सितम्बर को श्री महाराज को उनके रसोइये धौड़ मिश्र ने दूध में संखिया मिलाकर.......पीने को दे दिया। ऋषि ने विषपान किया और इसका जो प्रभाव होना था सो वही हुआ। रसोइये का नाम क्या था? धौड़ मिश्र या जगन्नाथ? यह व्यर्थ का विवाद है। मुख्य बात यही है कि उन्हें दूध में विष दिया गया।

इन्दिरा गाँधी को किसकी गोली पहले लगी? यह प्रश्न गौण है। मुख्य बात यह कि प्रधानमन्त्री के अङ्गरक्षकों ने ही विश्वासघात करके उसकी हत्या की। यह छठा तथ्य स्मरणीय है।

७. डॉ. अलीमर्दान ने जानबूझकर कर मारने के लिए ऐसी औषधियाँ दीं कि वे बच ही न सकें। हितकर औषधि भी चौगुनी मात्रा से दी जावेगी तो परिणाम विपरीत ही निकलेगा। डॉ. सूरजमलजी ने डॉ. अलीमर्दान के घातक इलाज को ठीक नल समझते हुए भी पाप को सहन किया। यह साहस करके सत्य-सत्य बात कह देते तो ऋषि की हत्या का अनिष्ट न होता। यह सातवाँ तथ्य है जो ध्यान में रहना चाहिए।

८. महर्षि का स्वास्थ्य बिगड़ता गया परन्तु आर्यजगत् को कोई सूचना नहीं दी गई अर्थात् भक्तों से सब कुछ छुपाया गया। १२ अक्टूबर सन् १८८३ को राजपूताना गजट में किसी प्रकार का समाचार छप गया। इस पर अजमेर के एक आर्यसभासद् जेठमल ऋषि का पता करने जोधपुर गये। वह प्रथम आर्यपुरुष था जिसने जोधपुर में श्री महाराज से जाकर भेंट की। यह आठवाँ तथ्य है जो विशेष महत्व रखता है। यदि जेठमल वहाँ न जाते तो आर्यों को ऋषि का शव भी न मिलता।

९. जेठमल कवि भी था। उसने ऋषि जीवन पर एक काव्य रचा था। उसमें लिखा है कि रोम-रोम में विष प्रविष्ट हो चुका था।

१०. जेठमल प्रत्यक्षदर्शी साक्षी है। महर्षि के विषपान अमर बलिदान का उसने उस युग में वैर विरोध का सामना करते हुए वैदिक धर्म को स्वीकार किया था। उसने सत्य के लिए विरोध की कुछ भी चिन्ता न की। उसी सत्यनिष्ट निर्भीक जेठमल की साक्षी का इतिहास की दृष्टि से विशेष महत्व है। यह दशवाँ तथ्य है जो सर्वाधिक महत्वपूर्ण है।

११. जोधपुराधीश का भाई सर प्रतापसिंह बड़ा कपटी व धूर्त था। जब ऋषि को विष दिया गया तो यह व्यक्ति जिसने उन्हें निमंत्रण भिजवाया व बुलवाया था उन्हें मृत्यु शय्या पर छोड़कर स्वयं पूना में जुआ खेलने चला गया। इसके लिए ऋषि का कोई महत्व न था, इसकी रुचि इस निन्दनीय पाप कर्म में थी सो वहाँ मस्ती से जुआ खेलता रहा। उसे ऋषिभक्त बताना भयङ्कर भूल है। वह तो घोर पापी था। यह ग्यारहवाँ तथ्य भुलाया नहीं जा सकता। उसने अपने जीवन काल में अपने द्वारा प्रकाशित करवाये अपने आत्म-वृत्त में तथा अपनी आत्म-कथा में महर्षि की कभी चर्चा ही नहीं की। ऋषि से यज्ञोपवीत भी न लिया।

१२. महर्षि एक विद्रोही साधु थे। वे स्वदेशाभिमानी, स्वराज्य के मन्त्रद्रष्टा और विदेशी राज के घोर विरोधी थे। यह सबको मान्य है, परन्तु सर प्रतापसिंह वह व्यक्ति था जिसे अंग्रेजों ने सर्वाधिक उपाधियाँ दीं। इतनी उपाधियाँ तो अँग्रेजों ने महाचाटुकार और महाकपटी निजाम को भी नहीं दीं। यह बारहवाँ तथ्य है जो ध्यान देने योग्य है।

१३. अजमेर के प्रसिद्ध हकीम पीर अमाम अली ने औषधि देते हुए कहा था कि ऋषिजी को विष दिया गया है यह भी कहा था कि मैं सांखिया निकाल दूँगा। यह तथ्य पं. लेखरामजी के लिखे जीवन-चरित में

स्पष्ट रूप से दिया गया है। इस तथ्य का स्मरण रखिए।

१४. सर प्रतापसिंह ने स्वयं डॉ. दीवानचन्द पूर्वउपकुलपति आगरा विश्वविद्यालय को कहा था कि मुझे दु:ख है कि महर्षि को जोधपुर में विष दिया गया था जिससे उनकी मृत्यु हो गई। यह बात प्रतापसिंह ने पं. लेखरामजी रचित जीवन-चरित के छपने से पहले जोधपुर में ही कही थी। डॉ. दीवानचन्द ने यह तथ्य अपनी आत्मकथा में दिया है।

१५. ऋषि ने अजमेर में देह त्याग किया था। अजमेर वालों ने महर्षि के अन्तिम दिनों का जो प्रामाणिक व विस्तृत वृत्तान्त तत्काल 'आर्यसमाचार' मासिक मेरठ में भेजा था उसमें एक से अधिक बार विष दिये जाने की चर्चा है। यह तथ्य अति महत्वपूर्ण है।

१६. उस युग में राजस्थान में नैनूराम ब्रह्मभट्ट श्री गौरीशंङ्कर हीराचन्द ओझा, मुन्शी देवीप्रसाद व जगदीशसिंहजी गहलोत ये चार व्यक्ति नामी इतिहासकार थे। इन चारों ने ही लिखा है कि महर्षि को षड्यन्त्र से विष दिया गया था। श्री हरविलास सारदा ऋषि के बलिदान के समय १८-१९ वर्ष के थे। वह भी जाने-माने विद्वान् व इतिहासवेत्ता थे। आपने यह स्वीकार किया है महर्षि को षड्यन्त्र से विष दिया गया। यह सोलहवाँ तथ्य है जो विशेष महत्व रखता है।

१७. अभी-अभी एक नवीन तथ्य हमारे ध्यान में आया है। इससे पता चलता है कि महर्षि की हत्या का षड्यन्त्र जितना गम्भीर हम समझते थे, यह ता उससे भी कहीं अधिक गम्भीर था। ऋषिजी की मृत्यु का.... उनको मारने का श्रेय लेने वाले तो कई होंगे, परन्तु एक व्यक्ति तो डङ्के की चोट से यह लिखता है कि उनकी हलाकत का मुझे तो पहले ही ज्ञान था। उनका मारा जाना मेरे बड़प्पन का प्रमाण है। यह मेरी नब्बुनत का एक निशान है। यह पैगम्बर साहेब कौन थे ?

यह श्रीमान् मिर्जा गुलाम अहमद कादियानी थे जिनके पंथाइयों को आज मुसलमानों ने काफिर घोषित करके इस्लाम से निष्काषित कर दिया है।

मिर्जा गुलाम अहमद ने अपने ग्रन्थ हकीकत-उल-वही के अन्त में एक विस्तृत निर्देशिका दी है। इसके पृष्ठ ५१-५२ पर उन दर्जनों व्यक्तियों के नाम दिये हैं जो मिर्जा गुलाम अहमद के इलहामों के अनुसार हलाक हुए। कोई भी मिर्जा साहेब के अनुसार पूरा जीवन पाकर स्वाभाविक मृत्यु से नहीं मरा। इन सब लोगों की मृत्यु का पैगाम (सन्देश)अल्लाह मियाँ से मिर्जा साहेब को मिलता रहा। लोगों की मौत की डाक कादियानी ननी के डाकघर में प्राय: आती ही रहती थी। मरनेवालों में पादरी भी थे, मौलवी भी थे , कई हिन्दू थे। आर्यपथिक पं.लेखरामजी छुरे से मारे गये और ऋषि दयानन्द विष दिये जाने से। मिर्जा साहेब का इस मृत्यु के लाने व बुलाने में क्या योगदान रहा। यह तो आपने खुलकर नहीं बताया। आप अँग्रेज के पूर्ण भक्त थे। सरकार का पूरा संरक्षण प्राप्त था। ऋषि की हत्या में बहुत लोगों का प्रत्यक्ष व परोक्ष योगदान था। यह इस तथ्य से स्पष्ट है कि मिर्जा भी ऋषि को हलाक करवा के गद्गद् हो रहा था।

इससे पूर्व भी महर्षि दयानन्द का जीवन समाप्त करने के कई षड्यन्त्र रचे गये। कई प्रयत्न किये

गये। कई प्रयत्न किये गये। उन्हें इससे पूर्व भी कई बार विष दिया गया। जोधपुर में दिया गया विष जानलेवा सिद्ध हुआ। उन्हें लोक-कल्याण के लिए, ईश्वर के सद्ज्ञान वेद की रक्षा व प्रचार के लिए, सदाचार के प्रसार, व्यभिचार अनाचार के प्रतिकार के लिए अपना जीवन न्योछावर करके वीरगति पाने का गौरव प्राप्त हुआ। विरले महापुरुषों को ही बलिदान का मुकुट धारण करने का सम्मान प्राप्त हुआ करता है। विश्व-इतिहास में गौरवपूर्ण मृत्यु का सौभाग्य प्राप्त करनेवालों में ऋषि दयानन्दजी का नाम नामी भी स्वर्ण अक्षरों में लिखने योग्य है।

ये थे उनके बलिदान के सम्बन्ध में कुछ ऐतिहासिक तथ्य। अब उनके बलिदान को आध्यात्मिक दृष्टि से भी देखिए। इस दृष्टि से भी उनके देह-त्याग का दृश्य अत्यन्त प्रेरणाप्रद व महत्वपूर्ण है। इस दृश्य का कुछ वर्णन करने से पूर्व महर्षि द्वारा सत्यार्थप्रकाश के अन्त में मनुष्य की परिभाषा करते हुए लिखी गई ये पंक्तियाँ कितनी मार्मिक व शिक्षाप्रद हैं-''जहाँ तक हो सके, वहाँ तक अन्यायकारियों के बल की हानि और न्यायकारियों के बल की उन्नति सर्वथा करें। इस काम में चाहे उसका कितना ही दारूण दु:ख प्राप्त हो, चाहे प्राण भी भले ही जावें, परन्तु इस मनुष्यानुरूप धर्म से पृथक् कभी न होवे।''

ऋषिवर को देह त्याग से पूव शारिरीक कष्ट तो हुआ परन्त आपने एक बार भी मुख से 'आह' नहीं की। अँग्रेज डॉक्टर न्यूमैन भी आपके धीरज व चित्त की शान्ति देखकर दङ्ग रह गया। रोम-रोम फोड़ा बनकर फूट रहा था परन्तु आपने यह सब कुछ अटल ईश्वर-विश्वास व योगबल से सहन किया। मानो अपने उपरोक्त शब्दों का अपने आचरण से भाष्य कर रहे थे। 'दारुण दु:ख' मुस्कराते हुए सहा।

वे किस कोटि के योगी, ऋषि व आत्मज्ञानी थे इसका परिचय अन्त समय की कई घटनाओं से मिलता है। लाहौर से आए लाला जीवनदासजी ने पूछा,''महाराज आप कहाँ हैं?''

ऋषि ने उत्तर में कहा, ''ईश्वरेच्छा में।''

आपने ईश्वरेच्छा को, उसके विधिविधान को जिस प्रसन्नता से स्वीकार किया, उसके उदाहरण बहुत कम मिलेंगे।

मृत्यु से तीन दिन पूर्व उनकी इच्छा पूछी गई तो कहा कि मसूदा ले चलो। ऋषि ने मसूदा जाने का वचन दे रखा था। भक्तों ने यह तो न कहा कि आपको इस अवस्था में ले जाना ठीक नहीं। यह कहा कि तीन दिन पश्चात् ले चलेंगे। इस पर आपने कहा कि तीन दिन में तो पूर्ण आराम आ जावेगा। उस दिन भक्तों ने कहा, ''एक मास के पश्चात् आज का दिन आराम दिवस है।''

अन्तिम समय किसी ने पूछा कि आपका चित्त कैसा है? इस पर ऋषिजी ने कहा, ''अच्छा है, तेज और अन्धकार का भाव है।''

महर्षि के शब्द साधारण व्यक्ति की समझ में नहीं आ सकते। यह वाक्य यजुर्वेद की प्रसिद्ध ऋचा 'वेदाहमेतं पुरुषं महान्तमादित्यवर्णं तमस: परस्तात्' का ही भाव प्रकट करता है।

विष के कारण शरीर को दारुण दु:ख था तथापि ऋषिवर बोले, ''हे दयामय, हे सर्वशक्तिमान्

ईश्वर, तेरी यही इच्छा है, तेरी यही इच्छा है, तेरी इच्छा पूर्ण हो, आहा ! तूने अच्छी लीला की।''

ये शब्द मुख से निकले ही थे कि आत्मा भी देह को त्याग करके निकल गया। इन शब्दों का उच्चारण करने से पूर्व वेद मन्त्रों का पाठ किया, संस्कृत में प्रार्थना की, फिर भाषा में ईश्वर के गुणों का थोड़ा कथन किया। बड़े हर्षोल्लास को व्यक्त किया। देह-त्याग केसमय उनकी मन:स्थिति का वर्णन हम किन शब्दों में करें। आर्याभिविनय में एक ऋचा में ऋषि लिखते हैं, ''अत्यन्त प्रार्थना से गद्‌गद् होके पुकारें।'' परमेश्वर को गद्‌गद् होकर पुकारने की बात किसी और ने लिखी है क्या? दु:खी होकर तो सब प्रभु को पुकारते हैं, परन्तु दारुण दु:ख भी हो फिर भी आरत की भाँति रो-रोकर नहीं, महाराज गद्‌गद् होकर पुकार उठे,'' आहा तूने अच्छी लीला की ! तेरी इच्छा पूर्ण हो, पूर्ण हो, पूर्ण हो।'' आर्याभिविनय में जो प्रार्थना शब्दों में की गई या लिखी गई थी, देह का त्याग करते हुए उसी प्रार्थना का अनुवाद आचरण से कर दिखाया। अब सबको पता चल गया कि महर्षि दयानन्द किस कोटि के ऋषि महर्षि थे।

ऋषि के जीवन के अन्तिम दृश्य को लोगों ने पूरे ध्यान से नहीं विचारा। ''प्रभु तेरी इच्छा पूर्ण हो'' इसके मर्म को तो सबने जाना व इसकी चर्चा प्राय: की जाती है, परन्तु सारे दृश्य को समग्ररूप में लेने व समझने की आवश्यकता है। ऋषि ने नाई को भी बुलवाया। क्षौर करवाया। शरीर पर तो छाले ही छाले थे। सिर और मुँह से लहू बहने लगा। सब कुछ आनन्दपूर्वक सहा। उस नाई को उस युग में पाँच रूपये दिये। पहले प्रतिदिन लोग उठाकर बिठलाते थे। अन्तिम दिन स्वयं उठकर बैठे। मानो कि सब कष्ट भाग गया है। यह क्षौर ! यह तैयारी ! यह उत्साह ! यह उमङ्ग ! हृदय इतना तरङ्गित किसलिए ? ऋषि प्रभु की गोद में जा रहे हैं। अमरपद की प्राप्ति की वेला निकट पहुँच गई। मोक्षधाम की तैयारी थी।

महर्षि ने आर्याभिविनय में एक स्थान पर लिखा है-''आपकी आज्ञा का प्रणय अर्थात् उत्तम न्यायुक्त नीतियों में प्रवृत्त होके.......।'' अंग्रेजी भाषा में इसी भाव को प्रकट करने के लिए हम ''Wedded to Thy divine will'' कहेंगे। सुधि पाठक आर्याभिविनय के इस वाक्य को ध्यान में रखते हुए महर्षि के अन्तिम शब्दों ''प्रभु तेरी इच्छा पूर्ण हो, पूर्ण हो, पूर्ण हो'' पर मनन करें। जीते जी जो कुछ अक्षरों में लिखा, देह का त्याग करते हुए अपने व्यवहार में उसी का भाष्य कर दिखाया। इसी को कहेंगे करनी कथनी की एकता।

एक विचारणीय प्रश्न यह है कि महर्षि दयानन्दजी ने अपने पत्र में यह लिखा है कि हमने लोकोपकार के लिए समाधि का आनन्द छोड़ा है। आर्यसमाज में महर्षि के नाम पर शिक्षा का व्यापार करने वालों ने आर्यसमाज को एक स्कूली कम्पनी बना दिया है। ऐसे लोगों की धर्म, कर्म व ईशोपासना में तनिक रुचि नहीं हैं। इन लोगों ने ऋषि के इस वाक्य का बड़ा दुरुपयोग करते हुए सन्ध्यावन्दन को कभी महत्व दिया ही नहीं। ऋषि ने समाधि योगसाधना कभी नहीं छोड़ी। अन्तिम दिन तक भी समाधिस्थ होते रहे। इस उपरोक्त वाक्य का भाव केवल इतना ही है कि ऋषि ने अखण्ड समाधि का आनन्द छोड़कर लोकहित में जान जोखिम में डाल दी। (क्रमशः)

प्राचीन विश्वासों पर वेदों का प्रभाव

चीन और मिश्र

-इन्द्र विद्यावाचस्पति

हम यह सिद्ध नहीं करना चाहते कि संसार में जितने मत, सम्प्रदाय या धर्म उत्पन्न हुए हैं, उन सब की प्रत्येक बात वेद से ली गयी है। यह न केवल उपहास्य है, असम्भव भी है। न हम यही बताना चाहते हैं कि मनुष्य-बुद्धि ने अभी तक धर्म के क्षेत्र में कोई नया आविष्कार नहीं किया। मनुष्य के दिमाग ने पहले विद्यमान मसाले के आधार पर बहुत सी धार्मिक और आत्मिक सचाइयाँ ढूँढी हैं। यहाँ यह दिखाना अभिप्रेत है कि कई मार्गों से होते हुए वेदों के विचार प्राय: मनुष्य जाति के हरेक भाग में पहुँच चुके हैं और अपना प्रभाव उत्पन्न कर चुके हैं। मूल स्रोत के नाले और नालियों का जल बड़े-बड़े मत-मतान्तरों की नदियों से मिल कर उन पर प्रभाव उत्पन्न करने का काम कर चुका है। जो धर्म सीधे वेदों से उत्पन्न हुए, उनकी चर्चा हम ऊपर कर चुके हैं; एक बौद्ध धर्म रहा है, जिसकी चर्चा आगे की जायेगी। यहाँ उन मतों और विश्वासों के बारे में कुछ कहना है जो वैदिक धर्म से उत्पन्न नहीं, केवल प्रभावित हुए हैं। प्राचीन धर्मों में कई बातें इतनी समान पायी जाती हैं कि उनकी सत्ता आकस्मिक नहीं हो सकती। प्रतीत होता है कि अवश्य ही किसी समय इन सब जातियों का परस्पर सामीप्य तथा मेल-जोल रहा होगा, और जो धर्म प्राचीन था, उससे शेष सब प्रभावित हुए होंगे। प्रत्येक धर्म की वैदिक धर्म के साथ जो समानताएँ हैं, उन्हें दिखाने के लिए यह स्थान उचित नहीं है। यहाँ तो हमें केवल धार्मिक विचारों का विकास और विस्तार देखना है। उसके लिए समानताओं का दिग्दर्शनमात्र पर्याप्त है।

चीन का प्राचीन धर्म

जब हम चीन के प्राचीन सिद्धान्तों पर दृष्टि ड़ालते हैं, तो हमें भारत के प्राचीन धार्मिक विचारों के साथ अपूर्व समानता दिखाई देती है। चीन की, ईसा से २५१४ वर्ष पूर्व की धार्मिक अवस्था पर दृष्टि डालते हैं तो हमें दिखाई देता है कि वहाँ के लोग परमात्मा को पिता और पृथ्वी को माता मान कर पूजते थे। परमात्मा धर्म और अधर्म का अच्छा और बुरा फल देने वाला था। सबसे बड़ी बात यह है कि उस समय के चीन के धार्मिक विचारो में शैतान या नरक के लिए कोई स्थान नहीं था। चीन के प्राचीन धर्म का वृत्तान्त देते हुए प्रो. हर्बर्ट ए. गाइल्स अपनी '**Religions of Ancient China**' नामक पुस्तक में लिखते हैं:

"In this Primitive Monothiesm, of which only scanty, but no doubt genuine records remain, no place was found for any being such as the Badhist Mara or Devil of the Old and New Testaments"

''इस प्राचीन एकेश्वरवाद में, जिसके बहुत कम परन्तु असली सबूत मिलते हैं, बौद्धों के मार या पुराने या नए अहदनामे के शैतान के लिए कोई स्थान नहीं है।''

प्राचीन वैदिक विचारों में हम यह एक बड़ी विशेषता देखते हैं कि बुराई के पैदा होने के लिए किसी

जुदा शैतान की आवश्यकता नहीं समझी गयी। परमात्मा ही भलाई और बुराई का फलदाता है। कर्म करने वाला जीव है। वेद एक ही शक्ति को स्वीकार करते हैं। ऋग्वेद कहता है,"एकं सद्विप्रा बहुधा वदन्ति"। चीन के विश्वासों के विषय में प्रो. हर्थ अपने **Ancient History of China** नामक ग्रन्थ में लिखते हैं ।

"From records of Su King we are bound to admit that the ancient Chinese were decided monotheists."

प्राचीन सू किंग के लेखों से मानना पड़ता है कि चीन के प्राचीन निवासी निश्चित एकेश्वरवादी थे।

विश्वासों को छोड़कर अब हम यज्ञों की ओर आते हैं। यज्ञों के सम्बन्ध में हमें चीन और भारत में अपूर्व समानता दिखायी देती है। चीन के यज्ञ का डा. लैग (**Dr. Legge**) ने निम्नलिखित शब्दों में वर्णन किया है:-

The ceremonies and the sacrifices were preceded by fasting and various purifications on the part of the King and the parties who were to assist in the performances of them.

Libations of fragrant spirit were made to attract spirits, and their presence was invoked by a functionary who took his place inside the principal gate.

"यज्ञों से पूर्व व्रत और अनेक प्रकार की शुद्धियों का करना राजा और उसके पुरोहितों के लिए आवश्यक होता था। सुगन्धित रसों की आहुति दी जाती थी, ताकि देवता बुलाये जा सकें, और उनका आह्वान करने का काम एक कार्यकर्त्ता करता था, जो मुख्य द्वार के अन्दर की ओर खड़ा होता था।"

हम दोनों यज्ञों के विस्तृत वर्णनों को पढ़कर इस परिणाम पर पहुँचते हैं कि दोनों परस्पर बिल्कुल असम्बद्ध नहीं हैं।

भारतवर्ष के अत्यन्त प्राचीन नहीं, परन्तु मध्यकाल के बहुत-से विश्वासों का चीन के उस समय के विचारों से बहुत सा सम्बन्ध प्रतीत होता है। चीन में मध्यकाल में हम यज्ञों के साथ वृषभ के बलिदान का वर्णन पढ़ते हैं। मरे हुए बुजुर्गों के जीवित रहने का विचार बहुत पुराना था। उसके साथ धीरे-धीरे हम मृतकों के श्राद्ध की प्रथा को भी चलता हुआ पाते हैं। डॉ. लैग "सू किंग" के अनुवाद में लिखते हैं:

"A belief in the continued existence of the dead in a spirit state and in the duty of their descendants to maintain by religious worship a connection with them, have been characteristics of the Chinese people from their first appearance in history"

"इतिहास के प्रारम्भ से ही हम देखते हैं कि चीनी लोग अपने मृतों के सूक्ष्म रूप में रहन, और सन्तानों के धार्मिक पूजा द्वारा उनके साथ सम्बन्ध स्थिर रखनें में विश्वास रखते थे।"

यही विशेषता हमारे मध्यकाल के विचारों में पायी जाती है। यदि विचारों की पद्धति पर ध्यान दें तब भी हमें कुछ कम समानता दिखाई नहीं देती। प्रो. विनयकुमार सरकार ने इस विषय को अपनी "**Chinese Religion through Hindu Eyes**" नाम की पुस्तक में बड़ी योग्यता से प्रतिपादित करते हुए बताया है कि चीन का धार्मिक विचार-प्रवाह प्रायः उसी प्रकार चला है, जैसे भारतीय धार्मिक

विचार-प्रवाह । यह समानता किसी सम्बन्ध के बिना नहीं हो सकती। यह अनुमान करना उचित नहीं प्रतीत होता है कि इतना सादृश्य और स्थान में इतनी समीपता रहते भी भारत ने चीन पर कोई प्रभाव नहीं डाला। चीन के धार्मिक विचार समय की दृष्टि से अर्वाचीन है। चीन के प्राचीन लेखकों के कथनानुसार वहाँ का धार्मिक विकास ईसा से २९५३ वर्ष से पूर्व के लगभग प्रारम्भ होता है। उस समय फूसी (**Fushi**) नामक राजा ने यज्ञ और पूजा का संगठन किया था। ऋग्वेद का प्रारम्भसमय आजकल के यूरोपियन विद्वानों के मत में भी इससे बहुत पुराना है। इस कारण यह कल्पना निर्मूल नहीं है कि चीन के प्राचीनतम विचारों पर भी वेदों के विचारों का प्रभाव विद्यमान था।

मिश्र का प्राचीन धर्म

जब चीन से चलकर हम मिश्र में पहुँचते हैं, और वहाँ के धार्मिक विचारों का अनुशीलन करते हैं, तो हमें भारतीय विचारों से कुछ कम समानता नहीं मिलती। उस समानता को देखकर इस परिणाम पर पहुँचना कठिन नहीं है कि भारत तथा मिश्र के विचारों का परस्पर सम्बन्ध अवश्य रहा है। भारत और मिश्र में धार्मिक विचारों का भिन्न-भिन्न रूप से विकास अवश्य दिखायी देता हैं, परन्तु प्रारम्भ एक-सा ही है। हम दोनों देशों के विचारों के प्रवाहों के साथ-साथ ऊपर को जायें तो इसमें सन्देह नहीं रहता कि उनका मूल स्रोत कोई एक ही होगा। बहुत विस्तृत विवेचन के लिए हमारे पास स्थान नहीं हैं। हम कुछ-एक मुख्य सिद्धान्तों की तुलना पर ही सन्तोष कर लेंगे।

पहले हम मिश्र के ईश्वर-सम्बन्धी सिद्धान्तों को लेते हैं। अत्यन्त प्राचीन काल में, मिश्र के निवासी एक ईश्वर में विश्वास रखते थे। उनके ईश्वर-सम्बन्धी विश्वास का ''ईजिप्त का धर्म'' नामक पुस्तक में डॉ. बज ने निम्नलिखित शब्दों में वर्णन किया है:

"A study of Ancient Egyptiaon texts will convince the readers that the Egyptians believed in one God who was self-existent, immortal, invisible, eternal, omniscient, almighty and inscrutable, the maker of the heavens earth and underworld, the creator of the sky and sea, men and womenanimals and birds, fish and creeping things, trees and plants, and the incorporeal beings who were the messengers, that fulfilled His wish and word."

''पुराने मिश्र के धार्मिक ग्रंथों के अध्ययन से पाठक को निश्चय हो जायेगा कि मिश्र निवासी ऐसे एक ईश्वर में विश्वास रखते थे जो स्वयंभू, अमर,अदृश्य, नित्य,सर्वज्ञ, सर्वशक्तिमान् और अज्ञेय है, जो द्युलोक, पृथ्वी और पाताल का निर्माता है, जो आकाश और समुद्र, पुरुष और स्त्री, पशु और पक्षी, मछली और सर्पणशील जन्तु, वृक्ष और वनस्पति का निर्माता है और उन सूक्ष्म प्राणियों का भी उत्पन्न करने वाला है, जो उसकी इच्छा तथा शब्द का पालन करने वाले दूत हैं।''

पुराने मिश्र के ग्रंथों में देवता रूप मे, हापी (**Hapi**) नाम से, ईश्वर की निम्नलिखित शब्दों में स्तुति की गई है:

"He cannot be figured in stone, He is not to be seen in the sculptured images upon which men place the united crowns of the South and the North Furnished with uraei, and He cannot be made to come forth the from His secret place, The place where He liveth is unknown; He is not to be found in the inscribed shrines; there existeth no habitation which can contain Him, and thou canst not conceive His forms in thy heart."

''वह पत्थरों में नहीं चित्रित किया जा सकता,दक्षिण और उत्तर के विशेष आभूषणों से सुसज्जित मुकुट जिन मूर्तियों पर रखे जाते हैं, उनमें भी वह दिखाई नहीं दे सकता, और उसे उसके गुप्त स्थान से बाहर नहीं निकाला जा सकता। उसके निवास का स्थान अविदित है, वह अंकित समाधों में नहीं ढूँढ़ा जा सकता; ऐसा कोई स्थान नहीं है जिसमें वह समा सके। तुम उसकी आकृति का अपने हृदय में ध्यान नहीं कर सकते।''

इन दो उद्धरणों में ईश्वर-सम्बन्धी विश्वासों का सारांश आ जाता है। इन वाक्यों की निम्नलिखित वेद-मन्त्रों से तुलना कीजिये, तो आपको अद्‌भुत समानता दिखाई देगी।

स पर्यगाच्छुक्रमकायमव्रणमस्नाविरं शुद्धमपापविद्धम्।
कविर्मनीषी परिभू: स्वयम्भूर्याथातथ्यनोऽर्थान्व्यदधाच्छाश्वतीभ्य: समाभ्य:। यजुर्वेद ४०।८

वह परमात्मा व्यापक है, शरीर रहित है, उसके शरीर पर घाव नहीं होता, वह नाड़ी, नस के बन्धन से रहित है। वह शुद्ध है, पाप का उसमें लेश नहीं है। सत्य ज्ञान का कहने वाला, ज्ञानी, साक्षी, स्वयं ही विद्यमान, और सब पदार्थों का सदा से निर्माण करने वाला वही है।

न तस्य प्रतिमा अस्ति यस्य नाम महद्यश:।

जिसका अत्यन्त महान् यश है, उसकी मूर्ति नहीं बन सकती।

पुरुष एवेद सर्वं यद्‌भूतं यच्च भाव्यम्। यजु. १३।२

जो कुछ है या होगा, वह सब कुछ ईश्वर ही में है।

सूर्याचन्द्रमसौ धाता यथापूर्वमकल्पयत्। ऋ. १०।१९०।३

परमात्मा ने सदा की भाँति सूर्य, चन्द्र आदि का निर्माण किया।

इस समानता के अतिरिक्त दो और बातें ध्यान देने योग्य हैं। पुराने मिश्र निवासी जहाँ एक ओर एक देवतावादी थी, वहाँ दूसरी ओर वह अनेक देवतावादी भी थे। उनके देवता भी गिनती में सैंकड़ों तक पहुँचते थे। अनेक देवताओं के होते हुए भी वह एक ही देवता को मुख्य मानते थे। सब देवताओं के नाम एक मुख्य देवता के वाची माने जाते थे। तेमू (**Temu**) आत्मू (**Atmu**) आदि जो एक ओर सूर्य के नाम हैं, देवों के पिता और ईश्वर के लिए भी प्रयुक्त होते हैं। ओसिरस, आईसिस आदि नाम मिश्र के देवताओं के होते हुए भी प्राय: ईश्वर के विशेष नामान्तर नतर (**Neter**) के पर्यायवाची के रूप में प्रयुक्त होते हैं। बिल्कुल यही दशा वैदिक देवतावाची शब्दों की है।

ईश्वर का मुख्य नाम नतर है जिसका अर्थ ऐश्वर्य और बल है। नतर शब्द बिल्कुल इन्द्र का

पर्यायवाची प्रतीत होता है।

दूसरी बड़ी भारी समानता जीव, उसकी नित्यता, और पुनर्जन्म में विश्वास है। यह विचार मिश्र और भारत का खास अपना है। अन्य देशों में इस स्पष्टता से यह नहीं मिलता, जिस स्पष्टता से इन देशों में मिलता है। मिश्र के प्राचीन धर्म मे मरे हुए प्राणी का पुनर्जन्म और न्याय माना जाता था। उसमें जीवात्मा अनी (**Ani**) कहलाता था, जिसकी अन् धातु से उत्पत्ति प्रतीत होती है। प्र+अनी इन दोनों के मिलाप से प्राणी बनता है। हृदय का नाम 'क' था। 'क' नाम सुखमय आत्मा का है। मिश्र में भी 'क' शब्द चेतनता का पर्यायवाची प्रतीत होता है। हमारे साहित्य के स्वर्ग, नरक, यम तथा देवमाता सम्बन्धी मध्यकालिक विचारों का प्रतिबिम्ब भी मिश्र के तत्कालीन धार्मिक साहित्य में पाया जाता है।

मिश्र में इन विचारों की चर्चा को देख कर डॉ. बज ने लिखा है कि यह कहना कठिन है कि मिश्र के धर्म की ये विशेषताएँ कहँ से आईं। उन्हें सन्देह है, परन्तु सन्देह रखने की कोई बात नहीं। मिश्र में ये सिद्धान्त आगन्तुक थे, और जहाँ से वे गए वह स्थान भारत था। मिश्र के धार्मिक विचारों का मूल स्रोत भारत के वेदों में मिलता है।

महर्षि दयानन्द सरस्वती स्मृति भवन न्यास, जोधपुर के चुनाव सम्पन्न

दिनांक ३०–०६–१५ को महर्षि दयानन्द सरस्वती स्मृति भवन न्यास के चुनाव में निम्न पदाधिकारियों तथा अन्तरंग (कार्यकारिणी) सदस्यों का चयन हुआ :–

१.	कार्यकारी प्रधान	श्री विजय सिंह जी भाटी
२.	मन्त्री	श्री आर्य्य किशन लाल जी गहलोत
३.	उपमन्त्री	श्री विमल जी शास्त्री
४.	कोषाध्यक्ष	श्री जय सिंह जी गहलोत पालड़ी

कार्यकारिणी सदस्य :–

१. श्री दुर्गा दास जी वैदिक
२. श्री ओम प्रकाश जी आसेरी
३. श्री एल. पी. वर्मा जी
४. श्री सेवा राम जी जांगिड़
५. श्री रामेश्वर जी जसमतिया
६. श्री अमृत लाल जी जसमतिया
७. श्री राम नारायण जी शास्त्री
८. श्री नरेन्द्र शर्म्मा 'अल्पज्ञ'
९. श्रीमती चन्द्र कान्ता जी भाटी
१०. श्रीमती चन्द्रा जी जसमतिया
११. श्रीमती रूप वती जी देवड़ा

भवदीय

आर्य्य किशनलाल गहलोत

मन्त्री, महर्षि दयानन्द सरस्वती स्मृति भवन न्यास, जोधपुर

शारदीय नवसस्येष्टि : दीपावली
श्रीमद्दयानन्द निर्वाण
कार्तिक बदि अमावस्या

शारदीय शुभ शस्य सुहाई, अद्‌भुत सुन्दरता सरसाई।
मुद्‌ग, माष, तिल, शालि चुलाई, जन-मन भरते मोद-बधाई।।
लिपे पुते घर हैं छवि छाये, दीपावलि की ज्योति जमाये।
नवान्नेष्टि सज्जन करते हैं, शुद्ध गन्ध घर-घर भरते हैं।।
थल-थल में रम रही रमा है, सदन-सदन सुसमृद्धि सना है।

(श्री सिद्धगोपाल कविरत्न)

आनन्द सुधासार दया कर पिला गया। भारत को दयानन्द दुबारा जिला गया।
"शंकर" दिया बुझाय दिवाली देह का। कैवल्य के विशाल-वदन में बिला गया।।

(कविवर नाथूराम 'शंकर')

आज शरद्‌ऋतु की समाप्ति में केवल पन्द्रह दिन शेष हैं। पन्द्रह दिन पीछे सर्वत्र हेमन्त ऋतु का राज्य होगा और शीत का शासन सबको स्वीकार करना होगा। वर्षा के बीतने और शोत लगने पर जनता को कुछ विशेष समारम्भ (तैयारियाँ) करने पड़ते हैं। वर्षा ऋतु में वृष्टिबाहुल्य से वायुमंडल तथा घर बार विकृत, मलिन और दुगन्धित हो जाते हैं। बरसात के अन्त में उनकी संशुद्धि और स्वच्छता की आवश्यकता होती है। वायुमंडल का संशोधन हवन-यज्ञ से होता है और घर बार की स्वच्छता लिपाई-पुताई से की जाती है। अब ही भावी शीत निवारण के लिए गरम वस्त्रों का प्रबन्ध करना होता है। इसी समय सावनी की फसल का आगमन होता है। किसान के आनन्द की सीमा नहीं है। उसका घर अन्न-धान, माष, मूंग, बाजरा, तिल और कपास से भरपूर होने को है। इस अवसर पर श्रौत और स्मार्त सूत्रों में गोभिलगृह्यसूत्र, तृतीय प्रपाठक, सप्तमखण्ड, ७-२४ सूत्र, पारस्करगृह्यसूत्र द्वितीय कांड १७वीं कण्डिका, १-१८ सूत्र, आपस्तम्बीय गृह्य सूत्र १९ खण्ड मानव गृह्य सूत्र तृतीय खण्ड तथा मनुष्मृति के—

सस्यान्ते नवसस्येष्ट्या तथर्त्वन्ते द्विजोऽध्वरैः। 4 अध्याय ४ श्लोक २६

इस पद्य में नवसस्येष्टि वा नवान्नेष्टि (नव=नवीन सस्य=फसल वा खेती-इष्टि=यज्ञ, अर्थात् नवीन फसल के अन्न का यज्ञ) करने का विधान है। इन सब कार्यों के लिए पर्व कार्तिजक वदि अमावस्या तिथि प्राचीन काल से नियत चली आती है उसको दीपावली भी कहते है। वैसे तो प्रत्येक अमावस्या को दर्शेष्टि यज्ञ कर्मकाण्ड ग्रन्थों में विहित हैं, किन्तु कार्तिकी अमावस्या को दर्शेष्टि और नवसस्येष्टि दोनों दृष्टियों के विधान हैं, क्योंकि उनसे इस अवसर पर वर्षा ऋतु में विकृत वातावर्त की विशेष संशुद्धि अभीष्ट

है। वर्षा के अवसान पर दलदलों के सड़ने, मच्छरों के आधिक्य तथा आर्द्रता (नमी) के कारण ऋतुज्वर (मौसमी मलेरिया बुखार) आदि रोग बहुत फैलते हैं। इसलिए इस ऋतु के शारदीय पूर्णिमा, विजयादशमी और दीपावली इन तीन पर्वों के होम, यज्ञों से उन रोगों का अनागत प्रतिकार भी अभिप्रेत है।

जैसे शारदीय आश्विन पूर्णिमा की चांदनी वर्ष भर की बारह पौर्णमासियों में सर्वोत्कृष्ट होती है, उसी प्रकार कार्तिकीय अमावस्या का अंधकार वर्ष की बारह अमावस्याओं में सघनतम होता है। इस अमावस्या के अन्धकार पर मृच्छकटिककार शूद्रक कवि की निम्नलिखित उक्ति पूरी उतरती है:-

लिम्पतीव तमोऽगांनि, वर्षतीवाञ्जनं नभः।
असत्पुरुषसेवेव दृष्टिर्विफलतां गता।।

अर्थ- अन्धियारी अंगों पर पुत-सी गई है, आकाश अंजनसा बरस रहा है, दृष्टि शक्ति इस प्रकार निष्फल (बेकार) हो गई है, जिस प्रकार असज्जन की सेवा व्यर्थ जाती है।

ऐसी घनी अन्धियारी रात्रि में, नवीन सावनी सस्य के आगमन से प्रमुदित कृषि प्रधान भारतवर्ष में मानो वर्ष की प्रथम उक्त सस्य (फसल) के स्वागत के लिए दीपमाला का उत्सव मनाया जाता है। यह दीपमाला भी गृहों की वर्षाकालीन आर्द्रता के संशोषण से उनके संशोधन में सहायक होती है।

आज राजप्रासाद से लेकर रंककुटीर तक की शोभा अपूर्व है। प्रत्येक नगर और ग्राम का प्रत्येक आर्य घर-परिमार्जन और सुधा (कली और चूना) वा पिंडोल मृत्तिका के लेपन से श्वेत रूप धारण किए हुए हैं। प्रत्येक अट्टालिका, आंगन और कक्ष्या (कोठरी) में दीपपंक्ति जगमगा रही है। धनियों क बहुमूल्य काचमय प्रकाशोपकरणों (झाड़ फानूस आदि शीशे आलाय) से लेकर दीनों के दीवलों (मृण्मय तेल के छोटे-छोटे दीपकों) तक की कृत्रिम ज्योति प्रकृति के प्रगाढ़ान्धकार से स्पर्द्धा (होड़ा होड़) कर रही है। पुरुषोत्तम प्रिया के कृपापात्रों के भवन दनाना व्यञ्जनों और विविध मिष्ठानों की सरल सुगन्ध से परिपूर्ण हैं, तो लक्ष्मी के कृपाकटाक्ष से वञ्चित दीनालय धान्य की खीलों से ही सन्तुष्ट हैं। संक्षेपतः आज प्रत्येक आर्य परिवार ने अपने गृह को स्ववित्तानुसार मनोहर बनाने का भरपूर प्रयत्न किया है।

आज वर्ष के प्रथम शस्य-श्रावणी शस्य के शुभागमन के अवसर पर गृहों को शोभा और समृद्धि के आवासयोग्य बनाना स्वाभाविक और समुचित ही था, यही लक्ष्मी की पूजा थी, क्योंकि पूजा का वास्तविक भाव योग्य को योग्य स्थान का प्रदान ही है। आज नवशस्य के शुभागमनावसर पर शोभा और समृद्धि को उसका योग्य स्थान प्रदान-शोभा की समुचित स्थान और अवसर पर स्थापना ही उसकी वास्तविक पूजा है। किन्तु तत्व के परित्याग और रूढ़ि की आरूढ़ता के युग पौराणिक काल में लक्ष्मी की पूजा का यह तत्वांश अन्तर्दृष्टि से तिरोहित हो गया और उसके स्थान में उल्लूकवाहना की षोडशोपचारपूजा प्रचलित हो गई। उसके वाहन (मूढ़ता के साक्षात् स्वरूप उल्लू महाराज) ने उसके उपासकों की बुद्धि पर ऐसा अधिकार जमाया कि वे अपनी उपास्य देवी के पदार्पण की प्रतीक्षा में दिवाली की सारी रात जागरण (रतजगा) करते

हैं। प्राय: बुद्धिविशारद भक्त शिरोमणि तो निद्रा अपसारण के लिए रात्रि भर द्यूतक्रीड़ा में रत रहते हैं। मन:कल्पित लक्ष्मी की प्रतीक्षा करते हुए भी साक्षात् लक्ष्मी (धन सम्पत्ति) को वे द्यूत द्वारा दुतकारते हैं- तिरस्कार पूर्वक उसको घर से धक्का देते हैं- "अक्षैर्मा दीव्य:" इस अथर्ववेद की कल्याणी वाणी का प्रत्यक्ष प्रतिवाद का अनादर करते हैं।

"आज कल के कलि काल में वैदिक कालीन पर्व शारदीय नवसस्येष्टि तथा दर्शेष्टि का तो सर्वथा लोप हो गया है और केवल उसके बाह्य आडम्बर गृहपरिशोधन परिमार्जन, दीप पंक्ति प्रकाशन, मिष्टान्न तथा लाजा वितरण और घोर अविद्यान्धकार काल में प्रचारित द्यूत, दुराचार आदि उसके अनुषंगिक उपचार शेष रह गये हैं। नबान्नेष्टि के चिह्न होम तक की परिपाटी प्राय: उठ गई है। शायद ही किन्हीं बिरले सौभाग्यशाली गृहों में आज की रात्रि में होम होता होगा। हां, कहीं-कहीं गुग्गुल धूप जलाने की रीति अवश्य प्रचलित है, जो प्रशंसनीय है।

दीपावली के विषय में भी विजयादशमी के समान यह एक कल्पित कथा चल पड़ी है, कि इस दिन मर्यादापुरुषोत्तम श्री रामचन्द्र वनवास से लौट कर अपनी राजधानी अयोध्या में वापिस आए थे और उनकी प्रजा ने उस हर्षोत्सव के उपलक्ष्य में आज दीपावली की थी। उसका अनुकरण वर्तमान दीपावली चली आती है। विजयादशमी के विवरण में इस प्रसंग के उल्लिखित ऊहापोह से भले प्रकार प्रकट होता है कि यह विचार भी सर्वथा कपोलकल्पित है, क्योंकि श्री रामचन्द्र जी रावणवध और लंका विजयानन्तर के तत्काल बाद ही अयोध्या लौट आए थे और जब उक्त विवेचनानुसार रावणवध फाल्गुन वा वैशाख में हुआ था तो श्री रामचन्द्रजी का अयोध्या प्रत्यागमन कार्तिक मास में किस प्रकार सम्भव है? प्रतीत हाता है कि दीपावली की दीपमाला के प्रकाश से भी रामचन्द्र के अयोध्या-प्रत्यागमन के हर्षोत्सव की कल्पना किसी कल्पनाकुंज मस्तिष्क में हुई हो और उसी से यह दन्तकथा सर्वसाधारण में प्रचलित हो गई हो। वैदिक धर्मावलम्बी आर्य सामाजिक महाशयों का परम कर्त्तव्य है कि जहाँ वे इस प्रकार की ऐतिहासिक तत्व की तिरोधायक कपोलकल्पनाओं का निरसन करें, वहां शारदीय नवसस्येष्टि के वैदिक पर्व का प्रत्यावर्तन करके, उसके गृहसंशोधन और दीपावली प्रकाशन आदि अनुषंगों के सहित आगे पद्धति प्रदर्शित प्रकारानुसार उसके स्वरूप का आर्य जनता में प्रचार करें।

आर्यों का एक-एक पर्व किसी विशेष कृत्य के लिए उद्दिष्ट है और इस प्रकार उसका सम्बन्ध किसी न किसी एक विशेष वर्ग के साथ स्थापित है। जिस प्रकार वैदिक धर्म की चातुर्वर्ण्य और चतुराश्रमव्यवस्था चराचर जगत् में व्याप्त है, उसकी व्याप्ति केवल मनुष्यमात्र में ही नहीं है, प्रत्युत तिर्यग्योनियों और उद्भिजों में भी गुणकर्मानुसार वर्ण और आश्रम विद्यमान हैं- पशुओं में गौ और वनस्पतियों में अश्वत्थ (पीपल) ब्राह्मण वर्ण के अन्तर्गत हैं। इसका विषय यहाँ अधिकतर विस्तार, प्रकरणान्तर-प्रवेश का दोषावह होगा- इसलिए संकेतमात्र इतना ही पर्याप्त है-इसी प्रकार आर्यों के पर्वों में

भी चातुर्वर्ण्य-व्यवस्था पाई जाती है। श्रावणी उपाकर्म, स्वाध्याय से सम्बद्ध होने के कारण ब्राह्मण पर्व है। लोक में भी श्रावणी (सलूनो) ब्राह्मणों का पर्व कहलाती है। विजयादशमी क्षत्रियों का दिग्विजय यात्रा और क्षात्रधर्म के विकास से सम्बन्ध रखने के कारण क्षत्रिय पर्व है और जनसाधारण भी उसको क्षत्रियों का पर्व कहते हैं। शारदीय नवसस्येष्टि वा दीपावली के पर्व का विशेष सम्बन्ध वैश्य कर्म (कृषि, वाणिज्य और उनकी अधिष्ठात्री समृद्धि देवी लक्ष्मी) से है, इसलिए दीपावली वैश्य पर्व है और लोग भी उसके प्रकरण में यथास्थान होगा। दीपावली के अवसर पर, जैसा कि ऊपर दिखलाया जाचुका है, नवीन सावनी-सस्य के अन्न से होम होता है, नवीन अन्न की लाजा (खीलें) और मिष्ठान बाँटे जाते हैं। इसी अवसर पर व्यवसायी जन अपने बहीखातों का नवीन वर्ष आरम्भ करते हैं। आढ़त की दूकानों पर नए बहीखाते दीपावली से ही बदले जाते हैं। यह सब बातें इस पर्व का वैश्यत्व पूर्णरूपेण स्थापित करती हैं। परन्तु जिस प्रकार चारों वर्ण और उनके गुण, कर्म मुख्यत: पृथक्-पृथक् होते हुए भी, गौण रूप से एक दूसरे के गुण कर्मों का समावेश चारों वर्णों में रहता है- ब्राह्मण वर्ण की सम्पत्ति स्वाध्याय, क्षत्रिय वर्ण की शूरता, वैश्य की समृद्धि और शूद्र का सेवा धर्म न्यूनाधिक चारों वर्णों के पुरुषों में पाया जाता है- उसी प्रकार हमारे पर्व भी विशेष धर्म से सम्बन्ध रखते हुए भी सर्वसाधारण के सम्मिलित (सांझ के) पर्व भी हैं।

किन्तु इस दीपमाला की महारात्रि का महत्व एक महा घटना ने और भी बढ़ा दिया। इसी के सांयकाल विक्रमी सं. 1940 तद्नुसार 30 अक्टूबर सन् 1883 ई. मंगलवार को वीर विक्रम की 20वीं शताब्दी के अद्वितीय वेदोद्धारक और वर्तमान आर्यसमाज के संस्थापक आचार्य महर्षि दयानन्द की उच्च आत्मा ने इस नश्वर शरीर का परित्याग करके जगज्जननी के क्रोड में आश्रयण का आनन्द प्राप्त किया था। महापुरुषों का देहावसान साधारण मनुष्यों की मृत्यु के समान शोकजनक और रुलाने वाला नहीं होता। उनका प्रादुर्भाव और अन्तर्धान दोनों ही लोककल्याण और आनन्द प्रदान के लिए होते हैं। महापुरुषों का इस लोक में आगमन वो लोकाभ्युदय के लिए प्रत्यक्ष ही है। किन्तु उनका इहलोक लीला संवरण भी आनन्द का हेतु होता है। वे परोपकार में अपने प्राणों को अर्पण करते हैं। संसार के सुख के लिए अपने शरीर की बलि देते हैं, इसलिए जनता उनके बलिदान पर उनकी कीर्ति का कीर्तन और गुणगान करके एक प्रकार का आनन्दानुभव करती है। उनका बलिदान स्वयं जनता के लिए परोपकारार्थ देहोत्सर्ग का उत्तम आदर्श स्थापित करके, जनता में अनुकरण, उदाहरण तथा सत्संप्रदाय का प्रवर्तन और सुख का संयोजन करता है। इस पाञ्चभौतिक शरीर को त्यागते हुए उनकी आत्मा स्वयं भी सन्तोष और आनन्द लाभ करती है। सन्तोष इसलिए कि वे अपने इस लोक में आने का उद्देश्य पूर्ण करते हुए अपने इस लोक के जीवन को परोपकार में विसर्जन कर रहे हैं और आनन्द इसलिए कि उनका जीवात्मा प्राकृतिक बन्धनों से मोक्ष पाकर परम पिता के संसर्ग का संयोग प्राप्त कर रहा है और साथ ही अपने प्रभु की इच्छा को पूर्ण कर रहा है। ''प्रभो तेरी इच्छा पूर्ण हो'' महर्षि दयानन्द के अन्तिम शब्द यही थे। किसी उर्दू कवि ने कहा है-

"राजी हैं हम उसी में जिसमें तेरी रजा है।"

इसलिए वैदिक धर्मावलम्बी आर्यों में मोहम्मदियों केसमान महापुरुषों के अन्तर्धान की स्मारक तिथियों पर शोकातुर होने वा रोने-पीटने की रीति नहीं है, प्रत्युत इन अवसरों पर उनकी गुणावली गाकर आत्मा में आनन्द का संचार किया जाता है। सिक्खों, कबीर पन्थियों, दादूपन्थियों आदि सनातन धर्मी आर्य सनतान (हिन्दुओं) के अन्य सम्प्रदायों में भी अपने धर्मसंस्थापक गुरुओं के चोला छोड़ने के दिन भण्डारा चलाने की रीति है जिसमें उनके शब्दकीर्तन करने और कड़ाहप्रसाद बाँटने का आनन्द मनाया जाता है और शोक लेशमात्र भी नहीं होता। फलतः आर्य जाति में शोक प्रदर्शनार्थ कोई भी पर्व नहीं है, न ही शोक प्रदर्शन में किसी पर्वता (उत्सवता) का होना सम्भव है। अतएव मृत्यूत्सव, शोकोत्सव वा शोकपर्व पद ही असंगत और असम्बद्ध हैं। आर्यों के यहाँ किसी भी महात्मा के भौतिक देह-त्याग के दिन को पुण्य-तिथि (पवित्र तिथि), निर्वाण दिन वा अन्तर्धान-दिवस कहते हैं।

अतः आज महर्षि दयानन्द के गुणानुवाद का अवसर उपस्थित है। महर्षि दयानन्द के आर्य जनता पर इतने असंख्य और अनन्त उपकार हैं कि सादृश क्षुद्र लेखकों की निर्बल लेखनी उनके लिखने में असमर्थ है। जिस प्रकार समुद्र की विस्तृत बालुका में असंख्य और अनन्त कण होते हैं और जिस प्रकार दिनकर की किरणावली की गणना नहीं हो सकती, उसी प्रकार महापुरुषों की भी गुणावली गणनातीत और महिमा अप्रमेय होती है। विचारक उस पर विचार और मनन करते रहते हैं। कवि उसका कीर्तन करते रहते है। गायक उसके गान से स्वरसना को रसवती और पवित्र करते रहते हैं और संसारी जन उनसे शिक्षा ग्रहण करके अपना जन्म सुधारते रहते हैं। सच पूछिये तो इस संसृति-सागर में महात्माओं की चरितावली ही तरणी है और उनके आदर्श कर्म ही ज्योतिस्तम्भ हैं, जो भूले-भटके बटोहियों को मार्ग दिखलाते और पार लगाते हैं। मर्यादा पुरुषोत्तम श्री रामचन्द्र की जीवनी न जाने कितने कवीश्वरों के वाग्विलास का विषय बनी है। संस्कृत और हिन्दी काव्यों का प्रचुर भाग श्री रामचन्द्र के गुणानुवाद से ही व्याप्त हैं। रामकथा ने न जाने कितने पथिकों को सत्पथ दिखलाया है।

योगिराज श्री कृष्ण की भगवद्गीता का कर्मयोग सहस्रों आलसियों और उदासियों को कर्ममार्ग में प्रवृत्त करके कर्मण्य और कर्मवीर बना रहा है। भगवान् तथागत का जीवन करोड़ों नर-नारियों और राव-रंकों के लिए शान्तिप्रद बना है। कहाँ तक गिनाएँ, संसार की सिरमौर भारत-वसुन्धरा तो ऐसे अनेक महात्माओं के गुणगान से गुञ्जायमान है।

ऊपर कहा जा चुका है कि आज हमारे लिए भी एक महात्मा के गुणगान से अपने कर्णकुहरों को पवित्र करने और उनसे शिक्षा ग्रहण करने का सुयोग पुनरपि प्राप्त है। आओ, आज आचार्य दयानन्द के पवित्र चरित्र की कुछ विशेषताओं पर विचार करके उपने समय का सदुपयोग करें।

रोगी के लिए हितकारी

आहार-विहार

उचित आहार-विहार का पालन करना और अनुचित आहार-विहार न करना जितना स्वस्थ और निरोग बने रहने के लिए जरूरी है उससे ज्यादा जरूरी बीमार पड़ जाने पर होता है ओर इससे भी ज्यादा जरूरी होता है रोग से मुक्त हो जाने पर ताकि गया हुआ रोग वापिस न लौट आये । रोग के वापिस लौट आने पर रोगी बहुत कष्ट उठाता है । इसी मुद्दे पर पर कुछ हितकारी जानकारी इस लेख में प्रस्तुत की गई है ।

आयुर्वेद के सम्पर्क में रहने वाला यह भलीभाँति जानता है कि किसी भी रोग की उत्पत्ति का कारण गलत और हानिकारक आहार-विहार और दूषित आचार-विचार करना ही होता है । जिस कारण से रोग उत्पन्न हुआ हो, उस कारण से बचाव करना, बीमार हो जाने पर और भी जरूरी हो जाता है ताकि रोग को बल न मिले । इसके बाद भी परहेज छोड़ना उचित नहीं होता क्योंकि रोग मुक्त होते ही फिर से बदपरहेजी करना शुरू कर देने से उस रोग का आक्रमण फिर से हो सकता है जिसे रोग का उलेटा (Relapse) होना कहते हैं इसलिए बीमारी से उठने के बाद भी व्यक्ति को खान-पान और रहन-सहन में पूरी सावधानी के साथ पथ्य के सेवन तथा अपथ्य के त्याग का पालन करते रहना चाहिए । यहाँ इसी विषय में कुछ विशेष जानकारी प्रस्तुत की जा रही है ।

आहार-हमारे स्वस्थ या अस्वस्थ होने में आहार का बहुत हाथ रहता है लिहाजा आहार के मामले में जरा भी लापरवाही ठीक नहीं होती । कभी कम मात्रा में कभी ज्यादा मात्रा में और वक्त-बेवक्त आहार ग्रहण करना **''विषमाशन'' करना कहलाता है ।** खाया हुआ पदार्थ हजम हुए बिना ही फिर से खा लेना **''अध्यशन'' कहलाता है ।** हितकारी और अहितकारी पदार्थों को एक साथ खाना **''समशन'' कहलाता है ।** ये तीनों प्रकार के 'अशन' (खाना) शरीर और स्वास्थ्य के लिए अहितकारी और दोष कारक है । अत: विषमाशन, अध्यशन और समशन करने से सदैव बच कर रहना चाहिए ।

वात प्रकोपक पदार्थ- खाद्य पदार्थों में बासे पदार्थ, बेसन के बने हुए पदार्थ, चना, मटर, मसूर, बैंगन, फूल गोभी, आलू, नया अनाज, मूंगफली, कटहल आदि **वात को बढ़ाते हैं ।** भूखे रहना, उपवास करना, दौड़ना, श्रम करना, कामातुर होना या यौन-क्रीड़ा में संलग्न होना, तैरना, तीव्र चिन्ता या शोक करना, जुलाब लेना, रक्त-स्त्राव, होना, देर रात तक जागना आदि कार्य वात को बढ़ाते हैं । वर्षा, हेमन्त और शिशिर ऋतु में **वात विकार बढ़ते हैं** । वात -प्रकोप होने पर पेट-फूलना, जोड़ों में दर्द होना, सिर दर्द होना, आमवात, पेट दर्द आदि व्याधियाँ उत्पन्न होती हैं ।

पित्त प्रकोपक पदार्थ- खाद्य पदार्थों में खट्टा दही, तले हुए पदार्थ, तेज मिर्च मसाले, लाल मिर्च, खटाई, खट्टे पदार्थ, बहुत खट्टी छाछ, तैल खाना (तेल की मालिश से पित्त कुपित नहीं होता, खाने से होता है) नमक, नमकीन पदार्थ, पुरानी मूंगफली, राई, करेला, कुल्फी, शराब, गर्म चाय, तम्बाकू, बासा भोजन, अण्डा-मांस, अरहर की दाल आदि पदार्थ पित्त को बढ़ाते हैं । गर्म हवा, गर्म वातावरण, तेज धूप, भूखे

रहना, क्रोध और ईर्ष्या करना, धूमपान करना, अति परिश्रम करना, अधिक जागरण देर तक धूप में रहना और मादक द्रव्यों का नशा करना आदि कार्य पित्त को बढ़ाते हैं । शरद ऋतु में पित्त के विकार बढ़ते हैं । पित्त प्रकोप होने पर उलटी होना, जी मिचलाना, गले, छाती व पेट में जलन होना, मल मूत्र विसर्जन के समय जलन होना, आँखों में जलन होना, सिर दर्द होना, चक्कर आना मुँह कड़वा रहना, अधोवायु और मल में कड़वी गन्ध आना, धातु विकार, स्वप्न दोष शीघ्रपतन, सिर में फ्यास (रूसी) होना, सिर के बाल झड़ना, रक्तप्रदर होना, त्वचा में जलन और शरीर में थकावट होना आदि व्याधियां उत्पन्न होती है ।

कफ प्रकोपक पदार्थ -खाद्य पदार्थों में खटाई, खट्टे पदार्थ, पका केला, पका आम, दही, दूध से बनी चीजें, कच्चे नारियल का पानी, नया अन्न, वर्षा का जल, नई सुराही या नये मटके का पानी, ज्यादा ठण्डा पानी या शीतप्रकृति के पदार्थ, इमली, अमचूर खट्टे बेर व खट्टे अंगूर, करोंदे, कच्चे अमरूद,चिरौंजी, खट्टा मक्खन, घी, आदि पदार्थ कफ को बढ़ाते हैं । गर्म वातावरण से एकदम तेज ठण्ड वाले वातावरण में जाना, तेज ठण्ड देर तक सहते रहना, वर्षा के पानी में भीगना, पानी में काफी देर तक तैरना, देर तक पानी में रहना, दिन में सोना, बहुत ज्यादा सोना, परिश्रम के काम न करना, लोभ करना, बैठक वाले काम करना आदि कार्य कफ को बढ़ाते हैं । कफ का प्रकोप होने पर गला खराब होना, खाँसी चलना, श्वास फूलना, टाँसिल्स में सूजन व दर्द होना, सुस्ती और तबीयत में गिरावट लगना, मुँह चिकना और थूक भरा होना, पेट में भारीपन, भूख न लगना, हलका बुखार, सर्दी जुकाम होना, सिर में भारीपन होना आदि व्याधियाँ उत्पन्न होती हैं ।

शरीर में वात, पित्त और कफ यदि समान अवस्था में बने रहें तो **हमारा शरीर स्वस्थ और निरोग बना रह सकता है ।** ऐसा तभी हो सकता हे जब हमारा आहार-विहार ऐसा रखा जाए जिससे वात, पित्त और कफ में से कोई भी कुपित न हो यानि बढ़े नहीं । यदि हम ऐसे पदार्थों का अति सेवन न करें और ऐसे कार्यो में अति न करें जो इन दोषों की वृद्धि करते हों तो ये तीनों- वात पित्त कफ- सम समान स्थित में बने रहेंगे । सम समान स्थिति में ये दोष नहीं धातु कहलाते हैं क्योंकि "**धारणाद धातवः स्मृताः**" के अनुसार जो तत्व शरीर को धारण करते हैं, स्थित रखते हैं वे धातु कहे जाते हैं जब इन तीनों में सें किसी एक की या दो की या तीनों की वृद्धि होती है तब ये 'दोष' कहे जाते हैं क्योंकि '**शरीर दूषणात् दोषाः**' के अनुसार ये शरीर को दूषित करने वाले हो जाते हैं ।

इतनी जानकारी प्राप्त कर आप स्वस्थ और निरोग बने रहने का रहस्य समझ चुके होंगे । अब यह आपकी खूबी , समझदारी और क्षमता पर निर्भर है कि आप इस जानकारी पर कितना अमल करते हैं कितना नहीं, कितना कर पाते हैं कितना नहीं । एक बात गाँठ में बाँध लीजिए कि आप प्रकृति के साथ सहयोग करेंगे तो सुखी रहेंगे, सहयोग नहीं करेंगे तो दु:खी होंगे । प्रकृति के नियमों को न तो तोड़ा जा सकता है और न बदला ही जा सकता है । या तो उनका पालन किया जा सकता है या उनकी अवहेलना की जा सकती है । जैसा किया जाएगा वैसा ही परिणाम सामने आयेगा । भले ही तत्काल आये या देर से आये पर आयेगा जरूर क्योंकि प्रकृति देर तो करती है पर अन्धेर नहीं करती ।

।। ओ३म् ।।

महर्षि दयानन्द स्मृति यज्ञशाला

लोकार्पण

दानवीर श्रेष्ठी महाशय धर्मपालजी आर्य

के कर कमलों द्वारा भद्रपद शुक्ला चतुर्दशी रविवार

दिनांक 27-9-2015 को सम्पन्न हुआ

ब्रह्मा:- आचार्य सत्यानन्द वेदवांगीशा, स्वामी धर्मानन्द सरस्वती

मुख्य यजमान :- श्रीसुरेशचन्द्र अग्रवाल, श्रीविजयसिंह भाटी

श्रीमान् महाशय धर्मपाल जी (M.D.H.)] दिल्ली	१५,००,०००
श्रीमान् अशोक जी बालानी (बालानी कंस्ट्रक्शन) बागर चौक, जोधपुर	१,५०,०००
स्व. मिश्रीलालजी स्व. भंवरलाल जी की स्मृति में	१,२१,०००
श्री अमृतलाल, लक्ष्मी नारायण एवं शरद जसमतिया, सुनारों का बास, जोधपुर	
स्व. श्रीमती पंखी देवी एवं स्व. माँगीलालजी गहलोत की स्मृति में	१,२१,०००
श्रीमती किरणदेवी-जय सिंह गहलोत पालड़ी खिचियाँ (पुत्र-पुत्रवधु) राकेश, प्रवीण गहलोत(पौत्र)	
स्व. कालूसिंहजी भाटी (बन्दूक वाले) की स्मृति में	१,००,०००
श्रीमती वन्दना-चितरंजन सिंह सुपुत्र श्रीमती चन्द्र कान्ता-विजयसिंहजी भाटी (पौत्र-पौत्रवधू)	
स्व. कालूसिंहजी भाटी (बन्दूक वाले) की स्मृति में	१,००,०००
श्रीमती सुचि- जगमोहन सिंह सुपुत्र श्रीमती चन्द्र कान्ता-विजयसिंहजी भाटी (पौत्र-पौत्रवधू)	
स्व. हरकंवर आर्य्या एवं स्व. नथमल गहलोत की स्मृति में	१,५०,०००
श्रीमती सरस्वती - किशनलाल गहलोत (पुत्र-पुत्रवधु)(नथमल राखी)	
स्व. हरकंवर आर्य्या एवं स्व. नथमल गहलोत की स्मृति में	१,५०,०००
श्रीमती विद्योत्तमा-महेन्द्र गहलोत (पौत्र-पौत्रवधू)	
स्व. हरकंवर आर्य्या एवं स्व. नथमल गहलोत की स्मृति में	१,५०,०००
श्रीमती हनिषा-नवीन पंवार (पौत्री-पौत्री दामाद)	
स्व. हरकंवर आर्य्या एवं स्व. नथमल गहलोत की स्मृति में	१,०१,०००
ज्ञानवती-जयनारायण सोलंकी , सुशीला-रामेश्वर देवड़ा (पुत्री दामाद)	
स्व. हरकंवर आर्य्या एवं स्व. नथमल गहलोत की स्मृति में	१,००,०००

श्री गोविन्दराम, श्रीमती गुलाब ध.प. स्व.दिनेश गहलोत(पुत्र-पुत्रवधु) कुलदीप, मनीष, जयेश(पौत्र) दादा स्व. दाऊलाल जसमतिया एवं बड़े पिता स्व.ओमप्रकाश की स्मृति में	१,०१,०००
श्रीमती स्मिता-गौरव सुपुत्र श्रीमती चन्द्रा-रामेश्वर जसमतिया स्व.केशवसिंह सांखला आर्य्य (पूर्व उप प्रधान आ.प्र.सभा राज.) की स्मृति में	५१,०००
श्री विक्रमसिंह सुपुत्र स्व. धीरजसिंह (सुपौत्र) ठेकेदार श्री ओमदत्त गहलोत चेरीटेबल ट्रस्ट सूरसागर जोधपुर द्वारा सहयोग	५१,०००
ट्रस्टीगण- जयसिंह, श्रीमती निर्मलादेवी, सोमेन्द्रसिंह, अजयसिंह, भरतसिंह गहलोत	
श्रीमती लताकंवर धर्मपत्नी विक्रमसिंह जी आर्य्य, पाल रोड	२१,०००
श्रीमती आर्य्य समाज जोधपुर, रातानाडा	२१,०००
श्री डॉ. खेतलखानी जी सुपुत्र स्व. गिरधारीलालजी (स्वामी सत्यानन्द जी)	१५,०००
श्रीमती स्नेहलता धर्मपत्नी नरपतसिंहजी गहलोत	२१,०००
श्री हरिसिंहजी सुपुत्र स्व. थानसिंहजी साँखला मगरा-पूँजला	२१,०००
श्री हरेन्द्रकुमारजी सुपुत्र स्व. क्षेत्र पाल जी गुप्ता, १०/२२१ चौपासनी हाऊसिंग बोर्ड	११,०००
श्रीमती मंजूदेवी धर्मपत्नी दिनेशजी सुपुत्र जयदेवजी अवस्थी , केशरबाग, रातानाडा	२१,०००
श्रीमती सीतादेवी धर्मपत्नी स्व. सेठ अणदाराम जी गहलोत ,फूलबाग, मण्डोर	२१,०००
श्री चैनसिंहजी परमार , खेतानाडी, मण्डोर रोड	२१,०००
श्री रमेशजी सुपुत्र स्व. कंवररामजी दूधिया (मनोहर ज्वेलर्स) सरदारपुरा	२१,०००
श्रीमती कमला धर्मपत्नी देवदत्तजी शर्मा, महावीर कॉलानी, रातानाडा	२१,०००
श्रीमती प्रमोदकुमारी धर्मपत्नी स्व. राजेन्द्रजी गुप्ता, सरदारपुरा	२१,०००
श्रीमती सुधा धर्मपत्नी दयालसिंहजी, बागर चौक	२१,०००
श्रीमती प्रेमलता धर्मपत्नी दुर्गादासजी वैदिक, उम्मेद चौक	२१,०००
श्रीमती आर्य्य समाज सरदारपुरा	११,०००
श्रीमती शोभा धर्मपत्नी स्व. मदनलालजी आसेरी सरदारपुरा	२१,०००
श्री चेतनप्रकाशजी आर्य्य, आदर्श नगर, लाल सागर	२१,०००
श्रीमती यशोदा धर्मपत्नी जगदीशजी आर्य्य, मगरा पूँजला	२१,०००
श्रीमती बसन्तीदेवीजी धर्मपत्नी ओमप्रकाशजी आसेरी सरदारपुरा	११,०००
श्रीमती मीना धर्मपत्नी सुधांशु टाक सरदारपुरा	२१,०००
श्रीमती निर्मलादेवी धर्मपत्नी नरेन्द्र शर्मा 'अल्पज्ञ', बलदेव नगर	२१,०००
श्री मदनलाल सुपुत्र स्व. देवीलालजी गहलोत, सरदारपुरा	११,०००
श्री सेवाराम सुपुत्र स्व. जीवराजजी साँखला, रकासनी, सूरसागर	२१,०००

श्रीमती श्यामादेवी धर्मपत्नी स्व. रामचन्द्रसिंह जी चौहान, बागर	२१,०००
श्री भगवान सुपुत्र किशोरीलाल जी परिहार, सूरसागर	२१,०००
श्री प्रेमसिंहजी साँखला मगरा पूँजला,	२१,०००
श्रीमती महिला आर्य्य समाज, किशन पोल, जयपुर	२१,०००
श्री सुभाष सुपुत्र धनजी गहलोत आर्य्य सूरसागर	२१,०००
श्री जगदीश सुपुत्र माँगीलालजी पीडांट, अशोक कॉलोनी, कीर्ति नगर,	२१,०००
श्री रामेश्वरलालजी छब्बरवाल (ऐशियन ग्रेनाइट्स, जालोर)	२१,०००
श्री शंकरलालजी सुपुत्र स्व. हनुमानप्रसाद जी आर्य्य राजीव नगर, पावटा सी रोड़	२१,०००
श्रीमती मंजूजी सोनी धर्मपत्नी श्री रमेशजी भजूड़ सुपुत्र स्व. सत्यनारायण जी	२१,०००
श्रीमती रामकंवरी जी धर्म पत्नी श्री सेवाराम जी जांगिड़, बागर चौक	२१,०००
श्रीमती संतोषजी धर्मपत्नी श्री श्यामलाल जी कट्टा, गोल बिल्डिंग	२१,०००
श्रीमती रणीताजी धर्मपत्नी श्री बुद्धिप्रकाशजी टाक, लाल भवन, घण्टाघर	२१,०००
श्रीमती रेणुजी धर्मपत्नी श्री सोभाग्यसिंह जी चौहान, मानसरोवर, पी.एफ.ऑफिस	२१,०००
स्व. श्रीमती प्रकाशदेवी धर्मपत्नी स्व. सोनी दाऊलालजी की स्मृति में श्रीमति प्रमिला धर्मपत्नी श्री रमेशजी मण्डोरा, श्रीमती लोचन जी संदीप जी, श्री शिव करण जी	२१,०००
दादा स्व. श्री चांदमलजी (कन्दोई) व दादी स्व. देवी अग्रवाल की स्मृति में श्रीमति मोनिका धर्मपत्नी मदन मोहन सुपुत्र श्रीमति गुलाबकंवर बृजमोहन सिंहल	२१,५२१

दानी महानुभावों से निवेदन

सभी आर्य दानी महानुभावों से निवेदन है कि अब आपका ''स्वामी दयानन्द स्मृति भवन न्यास, जोधपुर निरन्तर प्रगति की ओर है अतः आप अपना चन्दा भेज कर पुण्य के भागीदार बने एवं स्वामी दयानन्द के कार्य कलापों को आगे बढ़ाने में न्यास का साथ देकर स्वामी जी के पथ पर चलने का सकल्प लेवें

आर्य समाज के दस नियम

1. सकल सत्य विद्या विद्या से, जो कुछ जाना जाता है।
आदि मूल सब ही का 'शंकर', एक समझ में आता है।। टेर।।

2. सर्व–शक्ति–सम्पन्न–विधाता, ब्रह्म विश्व का कहता है
शुद्ध–सच्चिदानन्द निरामय, नित्य निःशंक न मरता है।।
सकल, अनन्त, अनादि, अजन्मा, भौतिक देह न धरता है।
न्यायशील सर्वज्ञ दयानिधि, जड़ जीवों का भरता है।।
धरौ उसी का ध्यान, दूसरा कौन मुक्ति का दाता है।
आदि मूल सब ही का 'शंकर', एक समझ में आता है।।१।।

3. जो विद्यानिधि वेदों को, तुम प्यारे पढ़ो पढ़ाओगे।
सुनो सुनाओगे तो अपने, तीनों ताप नसाओगे।।

4. धारौ सत्य असत्य विसारौ, तब चारों फल पाओगे।

5. झूठ सांच को जांच धर्म के, धाम काम कर जाओगे।।
तो न रहेगा उनमें जिनका, पंच – भूत से नाता है।
आदि मूल सब ही का 'शंकर', एक समझ में आता है।

6. तुम सामाजिक अरू देहात्मिक, उन्नति अनुदान किया करो।
मान मुख्य उद्देश्य षडङ्गी, का सबको सुख दिया करो।।

7. यथा योग्य वरतो सब से, प्रतिवार प्रेम यश किया करो।

8. आठों याम अविद्या को तज, विद्या रस को निपया करो।।

9. सब की उन्नति में निज उन्नति, की नवनिधि नर पवाता है
आदि मूल सब ही का 'शंकर', एक समझ में आता है।।३।।

10. सब के हितकारी नियमों के, पालन में परतन्त्र रहो।
नीति रीति सीखों समाज की, गुरू लोगों की गैल गहो।।
हितकारी नियमाकें के पालन, का आनन्द स्वतन्त्र लहो।
वैदिक मत के सार भूत यों, दश नियमों का भाव कहो।।
श्रीमद्दयानन्द स्वामी के, उपदेशों का खाता है।
आदि मूल सब ही का 'शंकर', एक समझ में आता है।।४।।

–सन्ध्या सुमन से

धारा 80 G के तहत सरकार द्वारा छूट प्राप्त

भारत सरकार
कार्यालय
Office of the
आयकर आयुक्त (छूट),
Commissioner of Income Tax (Exemptions),
कैलाश हाइट्स, तृतीय तल, लाल कोठी, टोंक रोड़, जयपुर 302015
Kailash Heights, 3rd Floor, Lal Kothi, Tonk Road, Jaipur – 302015

Name	**Maharshi Dayanand Saraswati Smriti Bhawan Niyas Jodhpur**
Address	Near Mohanpura Pulia, Maharshi Dayanand Marg, Jodhpur (Raj.) - 342001
PAN	**AAETM0579Q**
Date of order	23-10-2015
Unique Registration No (URN) for 12AA(1)(b)	**AAETM0579Q/08/15-16/T-0038/12AA**

Order of registration u/s 12AA (1) (b) of the I.T. Act, 1961.

1. An application in Form No.10A seeking Registration u/s 12A was filed on **06-04-2015**.
2. The Trust/Society/non-profit company was constituted by deed of trust, memorandum of association/instrument dated **13-03-2015** indicating its objects.

3. After considering the material available on record, the applicant Trust/Society/Company/Institution is granted registration as **"General Public Utility"** Trust/Society/Company/Institution and the provisions of Sections 11 and 12 shall apply in the case from **01-04-2015.** The Trust/Society/Company/Institution is registered at **AAETM0579Q/08/15-16/T-0038** of the register maintained in this office. The registration is granted subject to the following conditions:-

Conditions:

I. Order u/s 12AA (1)(b) does not conform any right of exemption upon the applicant u/s 11,12,and 13 of the Income-tax Act, 1961. Such exemption from taxation will be available only after the Assessing Officer is satisfied about the genuineness of the activities promised or claimed to be carried on in each F.Y. relevant to the A.Y. and all the provision of law acted upon. This will be further subject to provisions of section 2(15) of the Income-tax Act, 1961.

II. The Trust/Society/Non Profit Company shall maintain accounts regularly and shall get these audited in accordance with the provision of section 12A(1)(b) of the Income-tax Act, 1961. Separate accounts in respect of each activity as specified in memorandum shall be maintained. A copy of such account shall be submitted to the Assessing Officer. A public notice of the activities carried on/ to be carried on and the target group(s) (intended beneficiaries) shall be duly displayed at the Registered/ Designated Office of the Organization.

आयकर आयुक्त (छूट) जयपुर

P.T.O.

III. Separate accounts in respect of profits and gains of business incidental to attainment of objects shall be maintained in compliance to section 11(4A) of the Income-tax Act, 1961.

IV. The trust/Institution shall furnish a return of income every year within the time limit prescribed under the act.

V. The trust/Institution should quote the PAN in all its communications with the Department.

VI. The registration u/s 12AA of the I.T. Act, 1961 does not automatically confer any right on the donors to claim deduction/s 80G.

VII. This certificate cannot be used as a basis for claiming non-deduction of tax at source in respect of investments etc. relating to the Trust/institution.

VIII. All the Public Money so received including for Corpus or any contribution shall be routed through a Bank Account and such Bank Account Number shall be communicated to this office.

IX. No change in the terms of Deed of the Trust shall be effected without due procedure of law i.e. by order of the jurisdictional High Court and its intimation shall be given immediately to this office. The registering authority reserves the right to consider whether any such alternation in objects would be consistent with the definition of "charitable purpose" under the Act and in conformity with the requirement of continuity of registration.

X. No asset shall be transferred without the knowledge of the undersigned to anyone, including to any Trust/ Society/ Non-profit company etc.

XI. The registered office or the principal place of activity of the applicant should not be transferred outside State of Rajasthan except with the prior approval of the CIT (E), Jaipur.

XII. If later on it is found that the registration has been obtained fraudulently by misrepresentation or suppression of any fact, the Registration so granted is liable to be cancelled as per provisions u/s 12AA(3) of the Act.

XIII. The registration so granted is liable to be cancelled at any point of time. If the registering authority is satisfied that activities of the Trust/ Institution are not genuine or are not being carried out in accordance with the objects of the Trust/Institution.

XIV. The registration so granted is liable to be cancelled at any point of time u/s12AA (4) of the Act, if the conditions mentioned there in are attracted.

Sd/-
(Mukesh Verma)
Commissioner of Income-tax (Exemptions),
Jaipur.

No.CIT (E)/JPR/ITO(Hqrs.)/2015-16/ 2812 **Dated: 23rd October,2015** 26

Copy to:-

1. **Maharshi Dayanand Saraswati Smriti Bhawan Niyas Jodhpur**, Near Mohanpura Pulia, Maharshi Dayanand Marg, Jodhpur (Raj.) - 342001.
2. The Income-tax Officer (Exemptions), ward Jodhpur.

आयुक्त (छूट) जयपुर

(Surendra Yadav)
Income Tax Officer (H.Qrs.),
For Commissioner of Income Tax (Exemptions),
Jaipur.

भारत सरकार
कार्यालय
Office of the
आयकर आयुक्त (छूट),
Commissioner of Income Tax (Exemptions),
कैलाश हाइट्स, तृतीय तल, लाल कोठी, टोंक रोड़, जयपुर 302015
Kailash Heights, 3rd Floor, Lal Kothi, Tonk Road, Jaipur – 302015

Name	**Maharshi Dayanand Saraswati Smriti Bhawan Niyas Jodhpur**
Address	Near Mohanpura Pulia, Maharshi Dayanand Marg, Jodhpur (Raj.) - 342001
PAN	**AAETM0579Q**
No. & Date of Registration U/s 12AA	**AAETM0579Q/08/15-16/T-0038 dated 23.10.2015**
Date of Application U/s 80G	06-04-2015
Date of order	23-10-2015
Unique Registration No (URN) for 80G	**AAETM0579Q/08/15-16/T-0039/80G**

ORDER UNDER SECTION 80G (5)(vi) OF THE INCOME TAX ACT.

The aforesaid Trust/Society/Company/Institution has been registered u/s 12AA of Income-tax Act. It is certified that donation made to **Maharshi Dayanand Saraswati Smriti Bhawan Niyas** Jodhpur, Near Mohanpura Pulia, Maharshi Dayanand Marg, Jodhpur (Raj.) - 342001 shall qualify for deduction u/s 80G (5)(vi) of the Income-tax Act, 1961 subject to the fulfilment of conditions laid down in clauses (i) to (v) of sub-section (5) and (5B) of section 80G of the I.T. Act 1961.

2. This approval shall be valid in perpetuity w.e.f. **06-04-2015** unless specifically withdrawn.

3. The Return of Income in I.T.R.-7 along with the Income & Expenditure Account, receipts and payment account and Balance Sheet should be submitted annually to the **Income-tax Officer (Exemptions), ward** Jodhpur having jurisdiction over the case.

4. No change in the Trust Deed/Memorandum of Association shall be effected without the prior approval of the undersigned i.e. **Commissioner of Income-tax (Exemptions), Jaipur.**

5. Every receipt issued to a donor shall bear the Unique Registration Number (URN) and date of this order.

6. Under the Provisions u/s. 80G(5)(i)(a) the institution/fund registered u/s.12A, u/s.12AA(1)(b) or approved u/s. 10(23), 10(23C)(vi)/(via), etc., shall have to maintain separate books of accounts in respect of any business activity carried on and shall intimate this office within one month about commencement of such activity.

7. No cess or fee or any other consideration shall be received in violation of section 2(15) of the Income Tax Act, 1961.

Sd/-
(Mukesh Verma)
Commissioner of Income-tax (Exemptions),
Jaipur.

No.CIT (E)/JPR/ITO(Hqrs.)/2015-16/ 2813 Dated: 23rd Octoer,2015 26

Copy to:-
1. **Maharshi Dayanand Saraswati Smriti Bhawan Niyas Jodhpur**, Near Mohanpura Pulia, Maharshi Dayanand Marg, Jodhpur (Raj.) - 342001.
2. The Income-tax Officer (Exemptions), ward Jodhpur.

आयकर आयुक्त (छूट) जयपुर

(Surendra Yadav)
Income Tax Officer (H.Qrs.),
For Commissioner of Income Tax (Exemptions),
Jaipur.

ऋषि लंगर का आनन्द लेते हुए

Postal Reg. Jodhpur/434/2015-17 Date Of Posting 9,10-11-2015

यज्ञशाला में मंचासीन

माननीय श्री सज्जनसिंहजी कोठारी लोकायुक्त राजस्थान का सम्मान करते हुए

सत्वाधिकारी महर्षि दयानन्द सरस्वती स्मृति भवन न्यास के लिए प्रकाशक व मुद्रक विजयसिंह भाटी द्वारा महर्षि दयानन्द सरस्वती स्मृति भवन न्यास, महर्षि दयानन्द मार्ग, मोहनपुरा पुलिया के पास जोधपुर (राज.) से प्रकाशित एवं सैनिक प्रिण्टर्स, मकराणा मौहल्ला केरू हाऊस जोधपुर फोन 9829392411 से मुद्रित ।

सम्पादक फोन नं. 0291-2516655